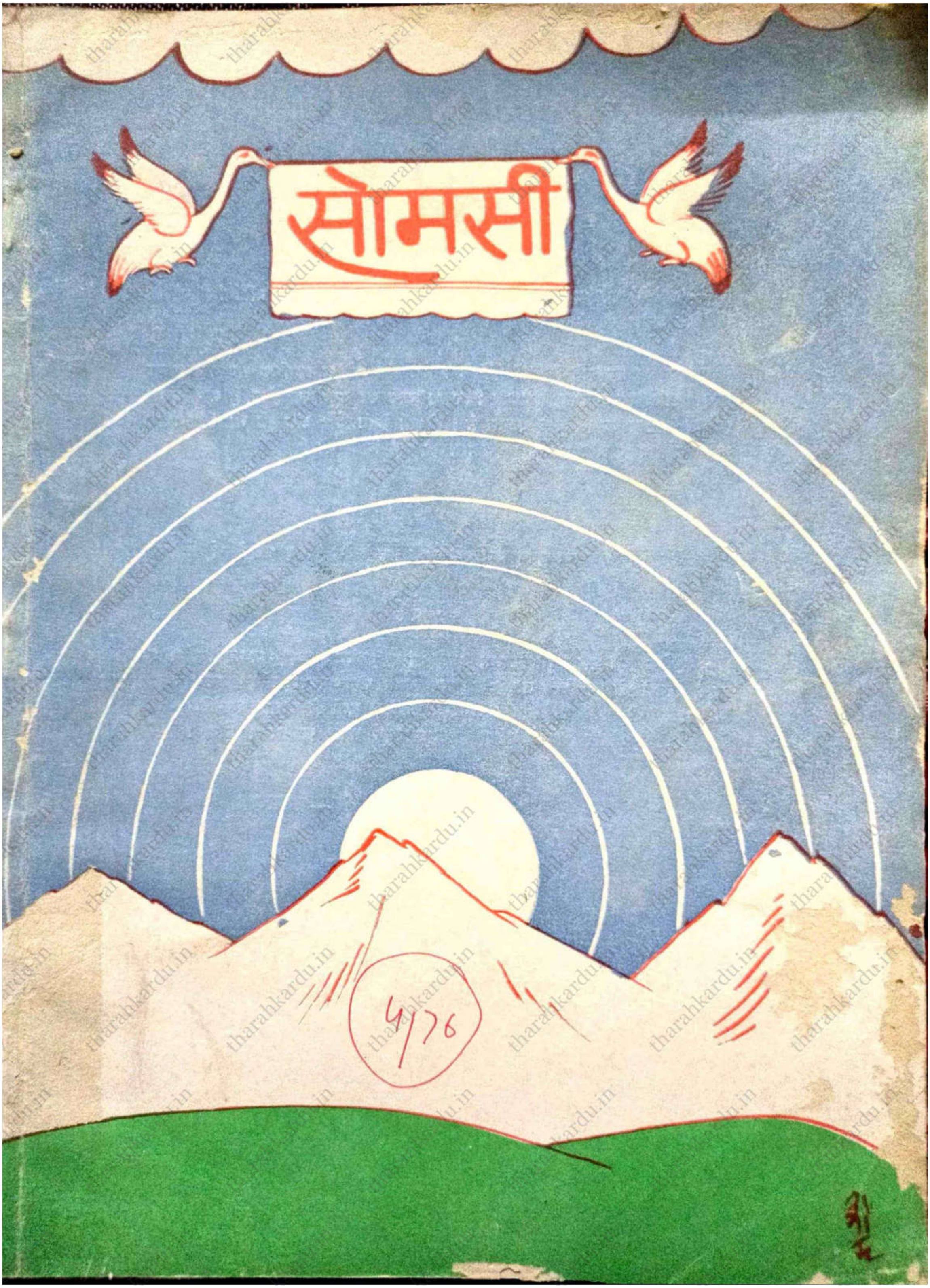
सोमसी
4/76

लेखकों से

—'सोमसी' पर्वतीय कला, संस्कृति तथा भाषा के क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका होने की अभिलाषा संजोये हुए है ।

हमारा यह प्रयत्न है कि 'सोमसी' के प्रत्येक अंक को अधिकाधिक संग्रहणीय बनाया जाए । साहित्यकार एवम् कलाकार चिरन्तन सत्य का उद्घोषक होता है और अपनी कृतियों के द्वारा अमर होना चाहता है । सोमसी के प्रत्येक अंक की भी चिर-नवीन होने की साध है और इसके लिए आपका सहयोग मिला भी है,

परन्तु

पर्वतीय संस्कृति, भाषा एवम् कला के अभी तक अनेक विषय अछूते रहे हैं,

इस हेतु

सांस्कृतिक इतिहास, नृतत्वशास्त्र, ध्वनि-शास्त्र, समाज-शास्त्र, कलागत विशेषताएं आदि विषयों के अतिरिक्त लोक-संगीत, परम्पराओं की व्याख्या, लोक-नाट्य । नृत्य, लोक-गाथा, त्यौहार तथा लोक-भाषा आदि के विभिन्न पक्षों को उजागर करने के सम्बन्ध में कागज़ के एक ओर लिखित अथवा टंकित शोधपूर्ण लेखों का स्वागत होगा ।

—सम्पादक

सोमसी

हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी का त्रैमासिक मुख-पत्र

वर्ष 2   अप्रैल, 1976   अंक 2

प्रबन्ध-सम्पादक
एच० सी० पराशर

सम्पादक
डा० बंशी राम शर्मा

परामर्श-मण्डल
1. आचार्य दिवाकर दत्त शर्मा
2. श्री खेम राज गुप्त
3. श्री हरि राम जसटा
4. श्री मौलूराम ठाकुर

सहयोगी
सरोज शर्मा

आवरण
ओम प्रकाश

प्राप्ति-स्थान :

हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, परिमहल,
शिमला-171009

tharahkardu.in

सोमसी

वर्ष 2 अंक 2

जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्तूबर में प्रकाश्य।

लेखक के विचारों तथा दिए गए तथ्यों से सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं।

प्रकाशित रचनाओं को पूर्ण अथवा आंशिक रूप में उद्धृत करने के लिए सचिव, हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, परिमहल शिमला-9 की अनुमति अनिवार्य है।

वार्षिक चंदा–१२ रु०

एक प्रति–३ रु०

विषयानुक्रमणिका

क्रमांक	लेख	पृष्ठ
	सम्पादकीय	(i)
1.	पझोता आन्दोलन —वैद्य सूरत सिंह आयुर्वेदाचार्य	1
2.	पहाड़ी पक्षियों की नामावली और उन सम्बन्धी उक्तियां —एम० आर० ठाकुर	23
3.	महासू —सी० आर० बी० ललित	29
4.	लाहुल में विवाह-प्रथा —बलराम	35
5.	बिलासपुरी लोकगीत मोहणा–एक अध्ययन —सीताराम खजूरिया	40
6.	ठेठ पहाड़ी के ठाठ —हरि राम जसटा	43
7.	हिमाचली लोकगीतों में सामाजिक चेतना —डा० गौतम शर्मा 'व्यथित'	50
8.	मण्डयाली लोकगीतों में भाव-सौंदर्य —डा० कांशी राम 'आत्रेय'	59
9.	हिमाचल का लोकनाट्य-बांठड़ा —वासुदेव शर्मा	65
10.	सांस्कृतिक विसरण और समन्वय —हरिचन्द पराशर	73
11.	विविधा–महासुई कविता–एक परिचय —कु० मीना ठाकुर	79
12.	शब्द-श्री —मनसा राम शर्मा 'अरुण'	82
13.	हमारी शब्द-सम्पदा	85
14.	गतिविधियां	93
15.	पुस्तक-समीक्षा	95

सम्पादकीय

चिन्तन को 'स्वयं से वार्तालाप' मानने वाले मनोवैज्ञानिकों का मत है कि संस्कृति का विकास भाषा के बिना सम्भव नहीं है । संस्कृति का विकास चिंतन के द्वारा ही सम्भव हुआ है । यदि सामाजिक जीवन ही संस्कृति का आधार होता तो मानवेतर प्राणियों की भी अपनी संस्कृति होती । लंगूर, जिनकी शरीर-रचना मनुष्य की शरीर-रचना से पर्याप्त रूप में मिलती है, अनुभव से सीख कर कार्यों को सम्पन्न करते हैं परन्तु भाषा के अभाव में वे संस्कृति-विहीन रहते हैं । भाषा के द्वारा संस्कृति विकसित तथा सम्प्रेषणीय होती है । उपदेश, सामाजिक क्रिया-कलाप, चिन्तन-धारा तथा पारिवारिक वातावरण संस्कृति को जीवित रखते हैं । भाषा तथा संस्कृति में से किस का विकास पहले हुआ होगा तथा इनमें से कौन अधिक महत्त्वपूर्ण है, आदि प्रश्नों का उत्तर ढूंढते समय हमें इनके पारस्परिक सम्बन्ध को नहीं भूलना चाहिए । ऐसा प्रतीत होता है कि जब मनुष्य ने अपने मानसिक विकास की प्रथम सीढ़ी पर पांव रखा होगा तो उसका साक्षात्कार भाषा के आरम्भिक रूपों से हुआ होगा । इन रूपों में ध्वनि-संकेत, लिपि-चित्र तथा विचित्र आवाजें भी सम्मिलित रही होंगी । इस प्रकार भाषा की सार्वभौमिकता, अति प्राचीन शब्द-समूह तथा मुहावरों की आश्चर्यजनक विभिन्नता आदि बातें संस्कृति की भांति भाषा के इतिहास को भी प्रागैतिहासिक बना देते हैं ।

प्रागैतिहासिक संस्कृतियों का अध्ययन करने के लिए केवल धातु-पत्रों, पत्थरों के औज़ारों तथा गुहा-चित्रों के अवशेषों का अध्ययन ही पर्याप्त नहीं है बल्कि विभिन्न भाषाओं में प्राप्त दुरुह तथा ठेठ शब्दावली इस दिशा में महत्त्वपूर्ण उपादान हो सकती है। ध्वनि-समूह तथा शब्द-भण्डार सम्बन्धी विभिन्नताएं संस्कृतियों की विविधता की ओर संकेत करते हैं क्योंकि ज्यों ज्यों नवीन सांस्कृतिक रूप पनपते जाते हैं, नई मांगों की पूर्ति के लिए नए शब्दों का निर्माण तथा आविष्कार होता रहता है।

संस्कृति के व्यक्त भाग का लोक-साहित्य से घनिष्ठ सम्बन्ध है। इस अंश का सम्प्रेषण भाषा के अभाव में कतई सम्भव नहीं है। इस प्रकार पुरातात्विक अध्ययन के लिए जहां प्राचीन सभ्यता-संस्कृतियों के अवशेषों का मूल्यांकन तथा अवलोकन आवश्यक है वहां शब्द-भण्डार, मूर्तियों, चित्रों तथा मानव-शिल्प के अन्य अवयवों-उपकरणों का आश्रय लेना आवश्यक होता है।

पर्वतीय लोक-साहित्य तथा प्रचलित भाषा के ठेठ शब्दों का अध्ययन प्रागैतिहासिक संस्कृति को समझने के मूल्यवान स्रोत हैं। भाषा-वैज्ञानिकों का कथन है कि एक ही भाषा में प्रचलित पर्यायवाची शब्द भी शतशः पर्यायवाची नहीं होते क्योंकि स्थिति व वातावरण के अनुसार एक ही शब्द की आत्मा का रूप बदलता जाता है। इस दृष्टि से राष्ट्र-भाषा को अधिक समृद्ध बनाने के उद्देश्य से भी लोक-संस्कृति तथा क्षेत्रीय भाषाओं में प्रयुक्त शब्द-समूह का संग्रह तथा विवेचन समय की मांग है।

प्रस्तुत अंक में पहाड़ी भाषा की विशिष्ट शब्दावली तथा लोक-साहित्य के कतिपय पक्षों की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करने का प्रयत्न किया गया है।

—**बंशी राम शर्मा**

पझोता आन्दोलन
१९४२

—वैद्य सूरत सिंह आयुर्वेदाचार्य

सन् 1942 के भारतीय-स्वतन्त्रता-संग्राम की उन तीक्ष्ण चिंगारियों से देश का शायद ही कोई कोना बचा हो। लोगों की उमंगें, उत्साह और शौर्य दर्शनीय थे। प्रकृत्या मौनस्वभाव इन पहाड़ों में भी, स्थान स्थान पर स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए एक अदृष्ट-पूर्व थिरकन उत्पन्न हुई और सहस्रों वर्षों से दोहरी गुलामी में जकड़े इस 'पहाड़ी-मुण्डू' ने भी समय की अनुकूल परिस्थितियों के साथ करवट ली।

पझोता, तत्कालीन रियासत सिरमौर की एक छोटी, पर उपजाऊ वैली का नाम था। क्योंकि, आरम्भ इसका इस घाटी से हुआ, इस लिए आन्दोलन—और बाद में समूचे 'गिरीबाह्' के इलाके का ही नाम 'पझोता' पड़ गया। इस इलाके के वासियों ने, देश में स्वतन्त्रता प्राप्ति का बिगुल बजने के साथ ही रियासती नौकरशाही की मनमानियों एवम् अन्याय का असह्य भार उठाने से इनकार कर दिया तथा इसके तुरन्त बाद अपना संगठन 'किसान-सभा' के नाम से शुरू कर दिया। वहां के सभी ज़ेलदारों, नम्बरदारों ने अपने-अपने पदों से त्यागपत्र दे दिये और कोई सरकारी काम न करने का संकल्प कर लिया। स्थान-स्थान पर विशाल सभाएं करके 'जन-तन्त्री-शासन' की स्थापना हेतु प्रस्ताव महाराजा सिरमौर की सेवा में भेजे जाने लगे, जिनमें महाराजा से दौरा करने और नौकरशाही की करतूतों का अध्ययन करने की विनती भी की जाती रही।

महाराज, क्योंकि नौकरशाही की रंगीनियों में काफी उलझ चुके थे, उन्हें दौरे के स्थान पर मुसल्ला पुलिस भेजने की सलाहें दी गईं। इस आदेश पर पं० श्री रामस्वरूप डी० एस० पी० को पचास पुलिस सिपाहियों के साथ पझोता भेज दिया गया। परिस्थितियों का अध्ययन करके समझदार डी० एस० पी० ने चुपके से नाहन लौट कर अपने पद से त्याग-पत्र दे दिया।

रियासती सरकार की तरफ से, आन्दोलन के मुख्य संचालक नौ व्यक्तियों—सर्वश्री (1) चुंचूराम, (2) गुलाबसिंह, (3) अतरसिंह, (4) मेहरसिंह, (5) मदन-सिंह, (6) सूरत सिंह (लेखक) (7) कलीराम, (8) पद्म राम और (9) कुल्गू राम को इकट्ठे नाहन जाकर महाराजा से मिलने का हठ किया जाता रहा, जिसका स्पष्ट अर्थ, संचालकों को गिरफतारी में लेकर आन्दोलन को कुचल देने के अतिरिक्त और कुछ न था।

अब, आन्दोलन दबाने का बीड़ा श्री जगत सिंह ठाकुर ने उठाया और डी० एस० पी० का पद सम्भालने से पहले, 'फूट डालो, राज करो' के अनुसार रियासत के सर्वेसर्वा श्री रामगोपाल 'अभिभ' (राजस्व-मन्त्री) के पझोता के दौरे को हमारे कुछ साथियों से धोखे में स्वीकृति ले ली। श्री अभिभ आए, परन्तु हम ने उन्हें, महाराजा का शत-

प्रतिशत प्रतिनिधि मानने से इनकार कर दिया और अपनी कोई भी मांग उनसे न मनवाने का निर्णय ले लिया । इस अपमान के कारण वे जले-भुने नाहन लौट गए और श्री जगत सिंह को पूर्ण डी० एस० पी० बना कर भेज दिया ।

इसके पूर्व श्री बूटीनाथ, ग्राम चोकर, तहसील रेणुका व उनके साथियों द्वारा भी समझौता कराने का विफल प्रयत्न किया जा चुका था । समझौतों की विफलता एवम् श्री अभिम की नाराजगी का अर्थ हम समझते थे । श्री जगत सिंह ने आते ही हमारे तीन व्यक्तियों को धोखे से, अन्धेरी रात में सोए हुए अपनी गिरफ्त में लिया और उसके बाद गांव कोटो भावगा को एक अन्धेरी रात में फिर गिरफ्तारी के लिए घेर लिया । इस व्यक्ति की मूर्खता भरी सख्तियों का परिणाम यह हुआ, कि, लोग भड़क उठे और उन में व पुलिस में वहां टक्कर हो गई ।

इस टक्कर से रियासती शासन को ब्रिटिश सरकार से सेना भेजने की आज्ञा मिलने का मार्ग प्रशस्त हो गया । परिणामस्वरूप सेना आई और पझोता दो महीनों के लिए 'मार्शल-ला' लागू करके सेना के अधिकार में दे दिया गया । सेनापति श्री हीरा सिंह, 'बाम' ने उपरोक्त नौ नेताओं को अपने आप को चौबीस घण्टों के भीतर सेना के हवाले कर देने का आदेश दिया । इस बीच भी श्री 'बाम', एडजूटेण्ट श्री नारायण दत्त 'बडोला' एवम् शास्त्री श्री दया राम (लोकल व्यक्ति) द्वारा समझौते के विफल प्रयत्न होते रहे ।

उधर, रियासती सरकार द्वारा निष्कासित डाक्टर यशवन्त सिंह परमार, जो छावनी मियांमीर, लाहौर, में एम० ई० एस० की ठेकेदारी सम्भाले हुए थे, से भी सम्पर्क स्थापित किया गया, साथ ही उनके साथी पं० श्री शिवानन्द 'रमौल' से भी । सैनिक अधिकारियों से समझौता टूट जाने पर सेना की गतिविधियां तेज़ हो जाना स्वाभाविक था । अब लगभग आए दिन किसी न किसी गांव में सेना द्वारा लूट-पाट व आगजनी की दुर्घटनाएं ज़ोर पकड़ती गईं । आरम्भ में ही उसने लेखक का घर डाइनामाइट कर दिया था । अन्ततोगत्वा दिनांक 11 जून, 1943 को उसने गांव कोटो-मावगा में साथी कलोरा जी का मकान फूंक दिया और उसे बुझाने के लिए इकट्ठा हुए आन्दोलन-कारियों पर गोलियां बरसा दीं, जिन से श्री कमना राम वहीं मौके पर शहीद हुए और अन्य छः साथी जख्मी हो गए । पोलिटिकल विभाग बरतानिया सरकार को दिखाने के लिए श्री कमना राम का शव शिमला लाया गया, परन्तु शव उठाने वाले साथियों को भी गिरफ्तार कर लिया गया ।

उधर भी पकड़-धकड़ का बाजार गरम हो गया । इस गोलीबारी के साथ नौ महीनों तक चला यह आन्दोलन कुचल दिया गया । पड़ौसी रियासत जुब्बल की तरफ भागे कुछ साथियों (मुख्य-संचालकों) को इश्तहारी मुल्जिम क़रार देकर, गिरफ्तारी के लिए पांच सौ रुपये प्रति व्यक्ति इनाम की घोषणा की गई । संक्षेप में, माह सितम्बर, सन् 1943 तक कुल उनहत्तर व्यक्ति गिरफ्तार किए गए और उन्हें जेल में डालने के बाद इलाके के शेष वासियों से हजारों रुपये जुर्माना वसूल किया गया । नौ नेताओं की सम्पत्तियां जब्त करके उनके विरोधियों के सुपुर्द कर दी गईं । व्यक्तिगत जुर्मानों के अति-रिक्त पच्चीस हजार रुपया सामूहिक जुर्माना भी वसूल किया गया ।

कैदी साथियों पर, धारा 120 बे, 121 व 121 अलिफ, 122, 124 अलिफ 148, 149, 307, 349, 395, 397 के अधीन ट्रिब्यूनल कोर्ट में मुकदमे चलाए गए। चौदह महीनों के ट्रायल के बाद चौदह साथी बरी कर दिए गए, तीन को दो-दो वर्ष एवं शेष को आजन्म कठिन कारावास का दण्ड दिया गया, जिसे बाद में पांच, सात और दस वर्षों के कारावास में परिवर्तित किया गया। जेल के दुर्व्यवहारों के लिए भूख-हड़ताल पर बेन्तों की सज़ा, काल कोठरी, एवं हथकड़ियों में टांगने के दण्ड मिले। चार साथी जेल में ही स्वर्ग सिधार गए। स्वतन्त्रता-प्राप्ति तक, तीन (लेखक, सर्वश्री बस्तीराम पहाड़िया व चेत सिंह वर्मा) के अलावा शेष साथियों को एक-एक वर्ष का व्यवधान देकर महाराजा के जन्म दिन के बहाने छोड़ दिया गया। उपरोक्त तीन का अन्तिम जत्था, स्टेट मर्जर के लिए, देहली से श्री ई0 पी0 कृपलानी के आने से एक सप्ताह पूर्व मार्च, 1948 को रिहा किया गया।

यही संक्षिप्त सी कहानी सिरमौरी भाषा की इस 'नाटी' (पद्य) के रूप में पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है—

हिटलरो-मुसोलिनी री, बांहोटी थी लाम्बी, रे मामा मेरा।
लाल मुहें अंगरेजो रे जीयोरी, लाम्बटू शी काम्बी, रे मामा मेरा ॥1॥

हिटलर और मुसोलिनी की बाहें लम्बी थीं। उनके (द्वितीय विश्व युद्ध में) भयंकर हमलों ने लाल मुहों वाले अंग्रेजों के दिल पत्तों की तरह हिला दिए।

कोरी पाया जरनैलें तिने, योरुपे कमालो, रे..........।
पोलैन्ड उडा-स्वीडनबुरा नारवे रा हालौ, रे मामा मेरा ॥2॥

यूरोप में उन जनरलों ने कमाल कर दिखाया। पोलैण्ड उड़ा, स्वीडन उड़ गया—और नारवे का भी हाल बुरा हो गया।

बेल्जियम-डेन्मार्को पाछे आई, चेको री बी बारी, रे..........।
फ्रांस गोआ-बरतानिए पान्दे किई, बोदकी बोम बारी, रे मामा मेरा ॥3॥

बेल्जियम और डैन्मार्क के बाद, चैक (चेकोस्लोवाक) लोगों की भी बारी आ गई। फ्रांस गया (समाप्त हुआ), बरतानिया पर भी ज़ोरों की बमबारी कर दी।

रोख नारणा गलामी री शांगली, कोसी दी ना पाए, रे........।
भावी बेठी बरतानिए बारी भारतो री आई, रे मामा मेरा ॥4॥

रक्षा कर भगवान, गुलामी की सांकलें किसी को भी न डालना। गर्दिश तो बैठी बरतानिया पर, मगर बारी (गर्दिश की) भारत की आ गई।

छेड़ू-छेओड़ी बचा ओन्दे चालो, भारतीयो बीरो, रे........।
कोरी घाली तिने जुलिमए म्हारे, कालजे री ल्हीरो, रे मामा मेरा ॥5॥

ऐ भारतीय वीरो, हमारे बच्चों-महिलाओं की र[illegible]ा करने के लिए चलो। उन जुल्मियों, (हिटलर—मुसोलिनी) ने हमारे कलेजों की लीरें कर दी हैं।

राजे-राणे, सोबे हिन्दुस्तानी म्हारी, मोदती खे चालो, रे ....।
देखदा नी एबे आपणी आखीए, लौन्दनो रा हालो, रे मामा मेरा ॥6॥

राजे-राणे, सब हिन्दुस्तानी, हमारी इमदाद के लिए चलो। अब हम से, अपनी आंखों लन्दन का हाल नहीं देखा जाता।

बोलो बापुए-जवाहर लाले भाई, हामो दे ना फा थी, रे ....।
झूठी, कोपटी जाति रे हामे एबे, एन्थी नी बे साथी, रे मामा मेरा ॥7॥

बापू और जवाहर लाल जी ने कहा कि भाई अब हमें तंग मत करो। (कई बार स्वतन्त्रता देने के वायदों के कारण) अब हम झूठी और कपटी जाति के साथी नहीं हैं।

म्हिना थेया सी अगस्त-उणशो-बयालशो रा सालो, रे.........।
बोलो भारतीए-'देशो रा आपणे, रोसता सम्हालो', रे मामा मेरा ॥8॥

वह साल 1942 का अगस्त था, जब (अंग्रेजों को) भारतीयों ने कहा:-'अपने देश का रास्ता सम्भालो'।

राजे नोहिणीए-हाकमे दिता, गोयरा ए नारा, रे..........।
ओने-धोने बरतानिए देणा, माणुए सहारा, रे मामा मेरा॥9॥

रियासत नाहन (सिरमौर) के राजा (राजेन्द्र प्रकाश) और (उसके) हाकिमों ने नारा दिया : "बरतानिया को अन्न, धन और मनुष्यों द्वारा (हर तरह से) सहारा देना है"।

मोता किया तोबे राजे रो चाकरे, योजना बणाए, रे.........।
मोहण लालो कलैक्टरो री बोलो, डीबटी बे लाए, रे मामा मेरा ॥10॥

फिर, राजा और उसके कर्मचारियों ने मन्त्रणा की और योजना बनाई। उस योजना को कार्यान्वित करने के लिए मोहन लाल कलक्टर की ड्यूटी लगाई गई।

छाड़ा पोलकीए मोहण लाल, पझोते खे तू ऊबा, रे...........।
पोता लागा जोबे-लोके रे जियो दा, बोड़छा शा खूबा, रे मामा मेरा ॥11॥

ओ मोहन लाल, तुझे सब से पहले 'पझोता' (बिगड़ैल) इलाके में (योजनान्वयन के लिए) भेजा। लोगों को जब (योजना का) पता चला तो, दिलों में 'बड़छा' (बर्छा) सा चुभ गया।

कशोरी लालो री तशीलदारी दा-नेओंटा था थोड़ा, रे...........।
सोआं न्हियां बाबू मोहण लालो रा, सनोउरे खे घोड़ा, रे मामा मेरा ॥12॥

किशोरी लाल की तहसीलदारी में न्याय कम ही था। वे बाबू मोहन लाल (कलैक्टर) का घोड़ा सीधा ही गांव सनौरा ले गए।

मांझा देखा पझोते रा लाया, सनोउरे बे डेरा, रे..........।
आलू, नोजो रो भोरती रा तिने, हुकमो बे फेरा, रे मामा मेरा ॥13॥

उन्होंने पझोता के इलाके का बीच (केन्द्र) देखकर सनौरा में डेरा डाल दिया और आलू, अनाज तथा फौजी भर्ती का हुक्म दे दिया।

आए गोए मामा नारणा लोको रे, दिनड़ बे खोटे, रे........।
तिने हाकमे लाके रे किए, माणुषो बे कोठे, रे मामा मेरा ॥14॥

हे भगवान, अब लोगों के बुरे दिन आ गए। उन हाकिमों ने इलाके के लोग इकट्ठे (एकत्रित) कर लिये।

आलू निहाणी सरकारिए निरखे, डिपू दो बे ना जो, रे........।
निहणी खाचरी बगारिए एन्थी नी, आजणो रा काजो, रे मामा मेरा ॥15॥

उन्हें कहा गया:—आलू सरकार द्वारा निश्चित भावों पर डिपुओं पर जमा कराना पड़ेगा और खच्चरें बेगार (जबरिया मज़दूरी) में देनी होंगी इनकार करने का काम नहीं है।

घोणु-देबणू री खाचरी पाकोड़ी, झोगड़ा बे दूणा, रे............।
पाछू न्हिई, तिने बा बुआ तेरा, हुकमो ना शुणा, रे मामा मेरा ॥16॥

इसके अनुसार घणु और देवणु मियों की खच्चरें बेगार में पकड़ी गई, परन्तु वे उन्हें जबर्दस्ती छुड़ा ले गए और बाबू मोहन लाल का हुक्म न माना। फलस्वरूप दुगना झगड़ा बढ़ गया।

जोला-पोजला कलक्टर डोआ, नोहिणी खे पाछु, रे..........।
मियें बोलो तिणी चुंचुए-लाई, पोहाड़ो दी बे काछु, रे मामा मेरा ॥17॥

गुस्से में जला-भुना कलेक्टर वापिस नाहन चला गया। मियों के मुखिया श्री चुंचू राम ने अपने लोगों से कहा – तुमने 'पहाड़' से टक्कर ले ली।

बोलो ओतरे, डोन्डिए गला बे, चुंचू रे सहारे, ...
मांछो पुछणी लाके री म्हारे ठोगड़े वी सारे, रे मामा मेरा ॥18॥

- चुंचू राम के सहारे (सहयोग) से मियां अतर सिंह, मेहर सिंह, (डन्डी) और गुलाब सिंह ने कहा कि इस बारे हमने इलाके के लोगों और उनके मुखियों से मन्त्रणा करनी है।

खोला ठोगड़े चोउए तिने, जीयो रा ना भेदो, रे............।
चिट्ठी दियो हुन्दी कटोगड़े खे उबे, बोइदो ना बँदो, रे मामा मेरा ॥19॥

फिर उन चारों मुखियों ने दिल का भेद (भाव) खोला और कहा कि गांव कटोगा को पत्र देकर वैद्य (सूरत सिंह) को ऊपर बुला लो।

तियों उणशो नानणवें री सोम्बती, पांजे गोते बे काती, रे........।
स्कूलो आगें टपरोली रे लागी, ठोगड़े री पांची, रे मामा मेरा ॥20॥

उन्नीस सौ निनानवे के विक्रमी संवत के पांच गते (प्रविष्टे) टपरोली के (प्राइवेट) स्कूल के मैदान में मुखिया लोगों की पहली मीटिंग हुई।

सुख-दुखः लागे लोको रे होए गोई, कालजे री ल्हीरो, रे..........।
प्रेजीडेन्ट मियां लछमी सिंह चुणा, मोहिया बजीरो, रे मामा मेरा ॥21॥

लोगों की आपस में सुख-दुख की बातें लगीं तो कलेजे की लीरें (टुकड़े) हो गईं। उन्होंने गांव कोटला के मियां लछमी सिंह को प्रेजीडेण्ट और गांव लेऊ के मोती राम शर्मा को मन्त्री चुना।

बातो लाई एबे बेठियो 'बोइदे' मुसकूए होसा रे...........।
धोखा दिता तुमे साथियो-एबे नी, कोरीदा भरोशा, रे मामा मेरा ॥22॥

अब आराम से बैठकर वैद्य सूरत सिंह ने मुस्करा कर कहा :–'साथियो, तुमने प्रजा-मण्डल आन्दोलन की गिरफ्तारियों के समय साथ न देकर मेरे साथ धोखा किया है, इसलिए अब तुम्हारा विश्वास नहीं किया जा सकता।

एबे बोले ना भोइतो 'बोइदा' कानटु ना शूणो, रे..........।
म्हारे कोरणी आय-दे खे बोलो, लोटड़ूए लूणो, रे मामा मेरा ॥23॥

मियां लोगों ने कहा :– अब इस लान्छन के बारे कान कुछ अधिक नहीं सुन सकते। भविष्य के लिए अब हमने आपके साथ 'लोटे-लूण' करना है।

बोलो 'बोइदे' एकता कोरो, प्रेमो रा ना भावो, रे ....।
चालो राजे रा टेलीफोनो म्हारी, चाली ली बेधाओं, रे मामा मेरा ॥24॥

वैद्य सूरत सिंह ने कहा :– 'एकता करो और प्रेम-भाव बढ़ाओ। राजा के टेलीफोन चलते हैं, पर हमारी गांव से गांव 'धा' (आवाज़) चलेगी (जो सन्देश देने-लेने का काम करेगी)।

लिखा दिता हुन्दा राजे खे-ओरजो, दौरे री की ई, रे............।
बातो म्हारी शुणी दुःखोरी-माखता, गोन्तो खे ना न्हीए, रे मामा मेरा ॥25॥

राजा के लिए (नाहन) प्रस्ताव भेजा और उनसे दौरे पर आने को बिनती की। उसमें लिखा :– 'हमारे दुःखों की कहानी सुन जाइए और हमारा माखता (रंज) अगन्त (परलोक) के लिए न ले जाइए'।

शुणे राजा राजेन्द्र प्रकाशा, घोड़ी आई बूरी, रे...........।
खुंगो खाए ना चाकरो रा कोरे, आपणी बी स्हूरी, रे मामा मेरा ॥26॥

ऐ राजा राजेन्द्र प्रकाश, ध्यान से सुनना कि, बुरी घड़ी आ गई है, इसलिए सारी बातें (चुगलियां-खुशामदें) नौकरों की ही न सुनिए, कुछ अपनी बुद्धि से भी काम लेना।

कोई पोड़ा तू भोलेया-इनो, चाकरो रे बोसे रे.............।
प्रजा खाई इने लुटेयो-बैठे, गादी रे ना पोशे, रे मामा मेरा ॥27॥

ऐ भोले राजा, तू इस नौकरशाही के वश में क्यों पड़ गया, जिस ने प्रजा तो लूट कर खा ली और अब तेरी गद्दी के मालिक बन बैठे हैं (शासन सारा लाला रामगोपाल और राज माता के हवाले था)।

राजमाता मन्दालसा राणीए, राजो री ए भखी, रे ....।
मीठी खोरी ओसे हाकमो खे, ओसे पोरजे खे रूखी, रे मामा मेरा ॥28॥

ओ राज माता मन्दालसा राणी, तू राज करने की भूखी है। हाकिमों के लिए मीठी और प्रजा के लिए रूखी है।

देई गोई लाले रामगपालो रे, हाथो दो तू राजो, रे .. ..।
दिनो-दिनो रे टिकस लागे, पाले दो ना नाजो, रे मामा मेरा ॥29॥

तूने, राजकाज लाला रामगोपाल (वित्त मन्त्री) के हाथों में दे दिया है, जिससे दिन-ब-दिन हम पर टैक्स लगते चले जा रहे हैं और पल्ले में अनाज नहीं रह गया है।

एन्थी शोड़की-ना हस्पतालो, नोदी बेनी पूलो, रे ....।
घोटो, बोइरो, पौशु दे टिक्स, खोली ना स्कूलो, रे मामा मेरा ॥30॥

टैक्स देते हुए भी, न सड़कें हैं, न अस्पताल। नदियों पे पुल भी नहीं हैं। घराटों महिलाओं और पशुओं पर भी टैक्स हैं, फिर भी स्कूलों का कहीं नामो-निशान नहीं है।

सोबी दुखो रा चुकदा राजेया, बांठिया ओ लाजो, रे......।
म्हारी-तेरी बेई एक ता साथी, लोकूरो बे राजो, रे मामा मेरा ॥31॥

राजा साहिब, सब दुःखों की केवल एकमात्र (चुकती की) चिकित्सा है कि, हमारी-तुम्हारी एकता हो और साथ में 'लोगों का राज' (प्रजातान्त्रिक मन्त्री-मण्डल) हो।

भोरी पाए तेरे राजेया चाकरे, चुगलीए कानो, रे......... ।
हुन्दी फाटो बोलो धोतरी जेंनिए, उबड़ा समानो, रे मामा मेरा ॥32॥

परन्तु राजा, नौकरशाही ने चुगलियों से तेरे कान भर दिए हैं। उन चुगलियों से, जिनसे नीचे तो धरती और ऊपर आसमान फटता है।

पाए घाला तेसी राजे रे जीयो दा, चाकरे बगाड़ो, रे..... ।
हुन्दे ल्हेयो नोए लीडरो धोखे दे, कोयदी दे शाड़ो, रे मामा मेरा ।।33।।

अब उस राजा के मन में खुशामदी और चुगलखोर कर्मचारियों ने बिगाड़ पैदा कर दिया—इसलिए निर्णय हुआ कि मुख्य नौ लीडरों को धोखे से नाहन ले आओ और कैद में साड़ (डाल) दो।

पोड़ा डिपटी रामसरूपो रा, धामले ना डेरा, रे.......।
हुन्दे न्हिणे नौ लीडर पाणा, लाके दा बेगांव घेरा, रे मामा मेरा ।।34।।

डी0 एस0 पी0 रामस्वरूप ने धामला गांव में डेरा डाल दिया। उन्होंने कहा :— उन्हें (नौ लीडरों को) नीचे (नाहन) ले जाने और इलाके की नाकाबन्दी का हुक्म है।

आछे घोरो रा डिपटी थेया, ओकली रा कावा, रे.....।
दुःखो शुणेयो लोकोरी पाछू, नोहिणी खे भागा, रे मामा मेरा ।।35।।

डी0 एस0 पी0 अच्छे घर का था और बड़ा अक्लमन्द था। उसने जब लोगों के दुःख सुने तो वापिस नाहन चला गया।

हुन्दा छाड़ा राजे म्हेटदा मियां लछमी सिंह लोके, रे......।
साथी छाड़े रेके मेम्बर-राजे-लहेओ दे बे मोके, रे मामा मेरा ।।36।।

इधर बागियों ने अपने प्रेजीडेण्ट मियां श्री लछमी सिंह को महाराजा से मिलने व उन्हें मौके (दौरे) पे लाने के लिए नाहन भेज दिया और डेपूटेशन बना कर दूसरे सदस्यों को भी साथ भेजा।

बुरा तेसरा राजेरी झिड़किए, होए गोआ हालो, रे......।
छोड़ी पारटी साथी सगाथी बी, बोदला खयालो, रे मामा मेरा ।।37।।

महाराजा ने मियां लछमी सिंह पर जो झाड़ डाली, उस बेचारे का हाल बुरा हो गया। उसने पार्टी और सब साथी-सगाथी छोड़ दिए। अब उसके विचार ही बदल गए थे।

भागा मियां एबे लछमी सिंहा तू, क्योठंलो खे पाण्डा, रे.....।
साथी न्हियां पाण्डा मोहिया मोन्तरी, पाछ खेतु हाण्डा, रे मामा मेरा ।।38।

अब मियां लछमी सिंह तू पड़ोसी रियासत क्योंठल भाग गया और साथ में मही राम मन्त्री को भी ले गया। बजाय आगे चलने के तू पीछे की ओर चला।

प्रेजीडेण्ट चुणा मदन सिंह एबे, लोकरा नठाम्बा, रे....।
काम बोइदे सूरत सिंह आपु, मन्तरी रा साम्बा, रे मामा मेरा ।।39।।

अब प्रधान मियां श्री मदन सिंह चुने गए, जो कि लोगों के विश्वास का पात्र गिने जाते थे। मन्त्री का काम वैद्य सूरत सिंह ने स्वयं अपने जिम्मे ले लिया।

बूटीनाथ छोड़ा जेलो दा, आया पांची खे जदोले।
जोरा एन्थीनी साथियो कोरे मरजी जो होले, रे मामा......।40।।

किसी केस में सिरमौर की जेल में डाले श्री बूटी नाथ को इसलिए छोड़ा गया कि वे गांव जदोल में आन्दोलनकारियों के बीच जा कर किसी तरह आन्दोलन समाप्त करा

सोमर

दें। बातचीत सुनने के बाद श्री बूटी नाथ (ठेकेदार) ने कहा:—साथियो; मैं हर्गिज आप लोगों को मजबूर नहीं करता, जैसा आप की मर्जी में आए, करिए।

शुणे बाबूआ जगत सिंह तू, भागो रा ऐ नीचे, रे.....।
ठाणेदारा दा टालेयो लाया था, चाये रे बगीचे, रे मामा मेरा ।।41।।

ओ बाबू जगत सिंह सुन तू घटिया किस्मत का धनी है, इसलिए तुझे रामगोपाल ग्रभि ने थानेदारी से हटाकर चाय बाग (कौलागढ़ देहरादून) में लगाया था।

पोड़ी गरज तो-उजूए बेदा, झोकणे खे, हागू रे ......।
दूरे सुंचो-नो-डिप्टी रे बोणा, ओहदें रा लागू, रे मामा मेरा ।।42।।

अब, जब उन्हें तेरी जरूरत पड़ गई तो, आगे झोंकने के लिए तुझे बुला लिया गया। तूने भी दूर तक नहीं सोचा और केवल डी0एस0पी0 के ओहदे के लालच में आ गया।

सोदा रोए तेरे सोदी खे जोगरा, कारजो बे मोटे, रे......।
उबे ल्हेया झोट रामगोपालो, तू, पांची खे पझोतें, रे मामा मेरा ।।43।।

ओ पगले, तेरे ये मोटे (मूर्खतापूर्ण) काम सदा के लिए मिसाल बन कर रह गए। तू पंचायत (समझोता) कराने के लिए झट रामगोपाल को पझोता ले आया।

जिनो चाकरो रे दु:खोरा हामें, बेदी रोम्रा राजा, रे......।
केरे काटले सी सोंकोट म्हारे, सुंचदा तू भाजा, रे मामा मेरा ।।44।।

तू यह न सोच सका कि जिन कर्मचारियों के दु:ख के मारे हम महाराज को दौरे पर बुला रहे हैं, वे हमारे संकट कैसे काट लेंगे।

भाजो गोए तेसी म्हेन्टदे पोदमा, कोइदो-गलाबा, रे.....।
बेदा कुणिएं पांवणा टेयां, कुणिएं खराबा, रे मामा मेरा ।।45।।

क्योंकि, रामगोपाल को, कुछ साथियों से धोखे में स्वीकृति (गुप्त रूप से) लेकर बुलाया गया था, इसलिए श्री पद्मा राम, वैद्य सूरत सिंह और गुलाब सिंह ने उसे मिलने से इनकार कर दिया और पड़ताल की कि यह खराबी पार्टी में किसने पैदा की और रामगोपाल को मेहमान किसने बुलाया।

बेठे सुंचदे ठोगड़े किया, बातो रा नपटारा, रे.....।
चिटठी देणी हाथे मदनसिंह रे, ठोगड़ा ए म्हारा, रे मामा मेरा ।।46।।

फिर लीडर लोग सोच-विचार करने बैठे गए और इस उलझन का निपटारा कर दिया कि मिलेंगे तो सभी, परन्तु अपने प्रधान श्री मदन सिंह के हाथ से पत्र देने के अतिरिक्त और कोई बात नहीं होगी।

हुन्दे डोए घाटो-बाटेयो म्हिन्टदे, धामले खे बागी, रे.....।
चिट्ठी दिती-बाबू-रामगोपालो गे, खुम्बली थी लागी, रे मामा मेरा ।।47।

इस प्रकार आपसी निर्णय के बाद आन्दोलनकारी, टपरोली से धामला चले गए। बाबू रामगोपाल के हाथ पत्र पकड़ाया और पंचायत में बैठ गए।

म्हारा राजे रा कोजिया बापो बेटेरा तकरारो, रे......।
दु:ख बोलणो तेसीगे एन्थी नी, रेके दा तबारो, रे मामा मेरा ।।48।।

उन्होंने कहा:—'हमारा और महाराजा का झगड़ा बाप-बेटे का तकरार है, इसलिए हम महाराज से ही अपना दु:ख बयान करेंगे, किसी दूसरे पें हमें विश्वास नहीं है'।

बातो बागी री तेसरे लागी, कालजे दा तीरो, रे........।
चाला डोम्रा जोली तापियो राजेरा, गोरता वज़ीरो, रे मामा मेरा ।। 49।।

उस (रामगोपाल) के कलेजे पर बागियों की बातें तीर की तरह चुभीं। जल-भुन कर, महाराज का वह प्यारा विश्वास-पात्र वज़ीर नाहन चला गया।

खेली गोम्रा एबे जगतसिंहा तू, अभ्भि रे हाथे, रे......।
छाड़ा डिपटी बणाएओ-पोड़ा, बागी रे ना पाछे, रे मामा मेरा ।।50।।

ओ जगत सिंह, अब तू पूरी तरह रामगोपाल 'अभ्भि' के हाथों में खेल गया। उसे डी0 एस0 पी0 बना कर भेज दिया और अब वह बागियों के पीछे पड़ गया।

राज गोढ़ो रे किले दा लाया, डिपटी ए डेरा, रे.......।
राती घेरा गांव कोटी रा-दिता, धारो खे बी घेरा, रे मामा मेरा ।।50।।

अब डी0 एस0 पी0 ने राजगढ़ के किले में डेरा जमाया और एक रात को कोटी गांव घेर कर साथ में कनोगधार को भी घेर लिया।

नांगे न्हिएं राती झिड़ियो रामभज, इसरू लोहारो, रे......।
धाओ लागी कोठे रातीए होए, माणुवो हज़ारो, रे मामा मेरा ।।51।।

इस प्रकार घेरा देकर कोटी से रामभज व धार (कनोग) से इसरू लोहार को गिरफ्तार करके रात को नंगा खींच कर राजगढ़ ले गए, जिस पर बागियों ने 'धाएं' (अवाजें) लगाई और देखते-देखते रात को ही कोटी में हज़ारों आन्दोलनकारी जमा हो गए।

तेरा बाबूया जो जगतसिंहा, थेयाना कशरो, रे.....।
बैठी ओबलीथी मुण्डो दी, थेया, जींवटें गरूरो, रे मामा मेरा ।।52।।

बाबू जगत सिंह, तेरा भी दोष नहीं था, क्योंकि तेरे सिर पर भी गर्दिश सवार थी और मन में 'राज-शक्ति' व अपनी महानता का अहंकार भरा था।

ठाए पाया तिणी मूरखे नभागे, उल्टा ए बीड़ा, रे...............।
डाका दिता जोबे कोटी खे-पोदमें, जुबड़ी दा झीड़ा, रे मामा मेरा ।।53।।

उस मूर्ख अभागे ने यह उल्टा बीड़ा उठा लिया, इसी लिए जिस रात गांव कोटी में पुलिस ने डाका (घेरा) दिया, (पं0) पद्मा राम ने जगत सिंह को तप्पड़ में खूब मारा और घसीटा।

राजे पोरजेरी एबे तू मूरखा, कोरी मुश्रां होली, रे.................।
बाना पोदमे रोशी दा-न्हिएं, पुलशो टपरोली, रे मामा मेरा ।। 54 ।।

श्रो मूर्ख, तू राजा-प्रजा की (इस धर पकड़ के कारण) होली रचा मरा, परिणाम यह हुश्रा कि तुझे पं० पद्मा राम ने रस्सी में जकड़ा श्रौर तमाम पुलिस को पकड़ टपरोली ले गया।

राजा श्राया पटियालिया दौरे खे, चड़ी रे बे काण्डे रे..........।
पोता दिता रेंजीडेन्टो खे, बिजे, बागी खे ना कान्डे, रे मामा मेरा ।।55।।

उन्हीं दिनों महाराज पटियाला (यादवेन्द्र सिंह) चूड़धार के दौर पर श्राए। उन्होंने हालत का सही पता रेजीडेन्ट हिल् स्टेट्स को देकर बागियों के रास्ते में कांटे बो दिए।

परमारो डोए लुखियो पुछदे, बोइदो-गलाबा, रे................।
मियां मीरो री छावणी दा मिनो, भेणी खे सी फाभा, रे मामा मेरा ।।56।।

वैद्य सूरत सिंह श्रौर मियां गुलाब सिंह (नाकाबन्दी के कारण) रात को लुक-छिप कर डाक्टर यशवन्त सिंह परमार (उन दिनों परमार नहीं, वे भण्डारी कहलाते थे) से सम्मति लेने गए, जो उन्हें लाहौर के निकट छावनी मियां मीर में दूसरे दिन सवेरे मिल गए।

बागी मानियो राखे नकाली थे, रयासती सरकारे, रे.............।
ठेकेदारी एम० ई० एसो री किई तोबे डाक्टरे परमारे, रे मामा मेरा ।।57।।

उन्हें रियासती सरकार ने बागी मान कर निकाल दिया था, इसलिए वे छावनी मियां मीर में एम्० ई० एस० की ठेकेदारी करते थे।

राय दिती तिणी डाक्टरे-कोरे, फौजी दा ना जोंगो, रे............।
शिवानन्दो रे जोरिए कियां, डाकोरा परबोन्धो, रे मामा मेरा ।।58।।

डाक्टर परमार (भण्डारी) ने उन्हें राय दी कि फौज का मुकाबिला न करना। पं० शिवानन्द (कसौली) के द्वारा मिलने व डाक का भी प्रबन्ध कर दिया।

पाछू श्राए जेती होटियो सूरतसिंह, रो गलाबा, रे.................।
होणहारो रे घोरोदा पौड़ा ना, तिलोरा बे नागा, रे मामा मेरा ।।59।।

जब तक वैद्य सूरत सिंह श्रौर गुलाब सिंह लौट कर श्राए, (होनहार ज्यों की त्यों थी) उसके घर में एक तिल का भी अन्तर नहीं श्राया था।

हीरा सिंह छाड़ा, फौजी कमान्डर, एडजूटेण्ट बडोला, रे ....।
धारा एकी शोए चत्रालशो भावीरा, द्वारटू बे खोला, रे मामा मेरा ।।60।।

रियासती सरकार ने तब तक इलाके में हीरा सिंह कमाण्डर की कमाण्ड में फौज भेज दी श्रौर साथ में एडजूटेण्ट (नारायण दत्त) 'बडोला' को भेजा जिन्होंने धारा एक सौ चवालीस लगा कर भावी का द्वार खोल दिया।

1976

साथी कियां सारे लाके दा मार्शल-ला रा ऐलानो, रे......।
नाकाबन्दी थेई पोलिए कियां, जू झोरा समानो, रे मामा मेरा ।।61।।

साथ ही तमाम इलाका 'पझोता' में मार्शल ला की घोषणा कर दी। नाकाबन्दी पहले ही थी, अब युद्ध का सा सामान जुटा दिया।

चिटठी लिखी तोबे 'बोइद' लोकुरे, जीयोरा, ना भावो, रे .....।
बातो शुणो तुमे आयओ-एयोनी, जोंगोरा बे चावो, रे मामा मेरा ।।62।।

तब वैद्य सूरत सिंह ने उन्हें पत्र लिख कर लोगों के दिलों का भाव बता दिया और लिखा कि आप स्वयं आकर लोगों की बातें सुन लीजिए। उन्हें लड़ने का चाव नहीं है।

बेदे आए दुने अफसर फौजी पावणे टपरौली, रे ....।
बातो लागो दुई दोलो री खुलियो, जीवटे री मौली, रे मामा मेरा ।।63।।

बुलाए हुए दो सौ फौजी आफिसर टपरोली मेहमान आए। वहां दोनों दलों के लोगों में दिल खोल कर बातें हुई।

ल्हेया भाणतेरा शास्तरी, दयाराम बी टपरोली......
पांची घटी ना फौजी री डोई बिशकी सी डोली ।।64।।

वे फौजी आफिसर भाणत गांव के शास्त्री श्री दया राम को भी साथ टपरोली गांव में ले आए। पंचायत हुई, परन्तु कोई निर्णय न हो पाया और बेचारे फौजी आफिसरों की टोली खाली वापिस चली गई।

मांगा दौरा था राजेरा-मांगो नौ, लाके खे पोहाई रे......।
ल्हेई कुणिए पागलें शाजिए, लोकू री तबाही, रे मामा मेरा ।। 65।।

लोगों ने कहा:—राजा का दौरा मांगा था, इलाके के लिय उपद्रव नहीं, वह कौन पागल है, जो जबर्दस्ती लोगों के लिये तबाही लाया है।

हाये राजे रा आपणे कियां का, जुरमो सी एरा रे.......।
होक मांगा थेया आपणा दुःखो, टालणे रा जेरा, रे मामा मेरा ।। 66।

हम ने अपनी मुसीबतें हटाने का एकमात्र साधन 'हक' मांग कर अपने महाराजा का इतना बड़ा जुर्म क्या किया है?

डोआ लोको री काजिए 'मेजर' नोहिणी खे हुन्दा रे.......।
बेली तेरीया दौरे खे राजा, भोलखी, खेबू चून्ड़ा, रे मामा मेरा ।।67।।

लोगों का सन्देश लेकर मेजर नाहन चला गया। आकर बताया कि महाराजा ने रात दौरे का प्रोग्राम दिया, मगर रात खुलते को इनकार कर गए।

आया होटयो चुटिये टाटिए, मेजरो सी बामो, रे.......... ।
शुरू किएं तोबे लाके दे मार्शल-ला रे बे कामों, रे मामा मेरा ॥ 68 ॥

मैजर बाम तब नीची गर्दन से हट कर आए और इलाके में मार्शल-ला पर अमल किया एवम् उसके काम (लूट मार आदि) शुरू कर दिए।

दाबा 'बोइदो' रे घोरो दा डाइना-माइटो रा गोला, रे...... ।
तोजो चाणने खे भाणकू रोईना, नोजो रा ना तोला, रे मामा मेरा ॥69

वैद्य सूरत सिंह का मकान डाइना माइट कर (उड़ा) दिया, जिस से न तो खाना बनाने के बर्तन रहे, न अनाज ।

लूटा गांवटा चबीउलो रा गोए-माणुओ ना भागी, रे ..... ।
धावा बोला पालू कैम्पो दा आएना, हाथ दूए बागी, रे मामा मेरा ॥70।

वहां से वापसी में राजगढ़ जाते हुए चबीउल गाँव लूटा, लोग वहां के भाग गए, पकड़ में नहीं आए । गांव पालू में बागियों के कैम्प पर भी धावा बोला, लूट की, परन्तु वे हाथ न आए ।

गांव लूटा जोबे भाणते रा ग्हियों, नोजटरो घीयों, रे..... ।
खाडू बाकरे, जेवरे-कापड़े, रोजा ना बे जीयो, रे मामा मेरा ॥ 71 ॥

भाणत गांव लूट कर घी और अनाज आदि ले गये । सभी जगह लूटों में खाडू (भेड़ें) बकरे और जेवर-कपड़े वगैरह ले जाने पर भी उनका जी नहीं भरा।

गांव लूटदे मनोणी रे ग्हिई, जालमूरी घोड़ी रे......... ।
बोन्दू जोयनो दखायओ सोहागो री, तिली बी ना छोड़ी, रे मामा मेरा ॥ 72

मनोण गांव लूटते समय, जालमू पं० की घोड़ी भी ले गए और बन्दूक दिखा कर जालमू की बूआ श्रीमती जयनी देवी के नाक में लगी 'सुहाग' तिल्ली भी न छोड़ी ।

कोटी गांवटे लूटदे फुकी, लोछमी री कोठी रे . . . . ।
नीड़े धोरे रे गांटे लूटें कोई, कोरणी बेखोटी, रे मामा मेरा ॥ 73 ॥

कोटी गांव लूटते हुए लछमी देवी की कोठी जला दी आस-पास के दूसरे गांवों को लूटते हुए कई खोटे (बुरे) काम किए ।

गेरो जूनो तरता लओ रे साले, बेलों के रे सोमे, रे ..... ।
कोटो-कोलथो गिरदे फौजी रे, मोरचे, वे जोभे, रे मामा मेरा ॥ 74 ॥

ग्यारह जून उन्नीस सौ तैंतालीस के साल में, बाद दोपहर के समय पर, गांव कोट व कोलथ के इर्द-गिर्द फौज ने अपने मोर्चे जमा लिए।

कोटी फुकदी फौजो आई वधाओन्दे वे वागी, रे........।
शुरू किएं तोवे फौजीए फायर, बोरखा शी लागी, रे मामा मेरा ॥ 75 ॥

इस तरह सेना कोटी में (लछमी की कोठी) आग लगाने की गरज से आई और बागी आग बुझाने के लिए आये तो उन पर सेना ने फायर शुरू कर दिए, जिनसे गोलियों की वर्षा-सी लग गई।

धोन गांवटा कटोगड़े रा जेथा, कोमना सी जाया, रे......।
गोली खाई मांज माथे दी कामे, मुलको रे आया, रे मामा मेरा ॥76॥

वह कटोगड़ा गांव धन्य है, जहां कमना 'शहीद' का जन्म हुआ, जिसने बीच माथे में गोली खाई और देश के काम आया।

खाई गोली रेके भादरे ओसो सी, 'जीव शहिदो' रे.....।।
जिनो देखियो लोको री आखोटी, आशुए ओसो भीजो, रे मामा मेरा ॥77॥

जिन दूसरे बहादुरों ने गोलियां खाई वे 'जिन्दा-शहीद' (अब भी) हैं, जिन्हें देखकर लोगों की आंखें आंसुओं से भीग जाती हैं।

ओसे कुफरी रा तुलसी रामो, सी, नेरोरा कमालो, रे......।
जाती रामो डरेणें रा गोलिए, बुरा थेया हालो, रे मामा मे रा ॥ 78 ॥

वे हैं:—कुफर-मौन्ड गांव के गोली लगने से हुए लंगड़े श्री तुलसी राम, गांव नेरी-कोटी के श्री कमाल चन्द और गांव ड़रेणा के श्री जाती राम, जिनका गोलियां लगने से हाल बुरा था।

हेतरामें [illegible]रटे पालू रे ठाणे रे चेंतसिह, रे........।
गोली खाई तिने भादरे लाइजो, फौजीए ठींगें रे मामा मेरा ॥ 79 ॥

गांव पालू के श्री हेत राम शर्मा और गांव ठाणा-मुइरा के श्री चेत सिह—इन दोनों बहादुरों ने भी वे गोलियां खाई, जो फौजी लफंगों ने चलाईं।

लागी गांवटे कोलथो एकी, म्होंयशी दी गोली, रे...।
थागी लांगोड़ तुलसी रामो, री, फौजीए डोली, रे मामा मेरा ॥ 80 ॥

कोलथ गांव में बेचारी एक भैंस भी गोली से मर गई। अब, सब के रफा दफा होने पर, फौज वालों ने लंगड़े तुलसी राम को हिरासत में ले लिया।

रिखी रामो गाणे चाइलो, देवठी सरतू रे नांवों, रे.....।
मुएं काचड़ी जवानिएं होवके दे, शोगीए सो गांवो, रे मामा मेरा ॥81॥

गांव चायल के उस रिखी राम और देवठी-पंचड़ के सूरत राम के नाम गाने योग्य हैं, जो बेचारे गोलियों की आवाज की दहशत से पागल बनकर और बुखार के रोगी बनकर गोली चलने के दूसरे ही दिन, कच्ची जवानी में 'शहीद' हुए तथा जिन पर उन गांवों में शोक छा गया।

चुटो गोई एवे नेयों नशाफो री, राजे दी थी श्राशो, रे.....॥
पाण्डी न्हिई भोले लोकुए शिमले खे, कोमनेरी लाशो, रे मामा मेरा ॥ 82 ।

राजा से श्रब इन्साफ की उम्मीद टूट गई, इसलिये वे भोले लोग कमना राम का शव, रेजीडेन्ट को दिखाने के विचार से, शिमला ले गए।

बोसो थंई ना शोड़की हांडियो पोंहचे बुरें हाले, रे......॥
नोखा नेश्रों रेजीडेन्टो दा फालवा, पाकोड़ो बे घाले, रे मामा मेरा ॥83।

उन दिनों सड़कें, बसें कहीं नहीं थीं, इसलिये पैदल बुरे हाल से पहुंचे। वहां (जलाद) रेजीडेण्ट से विचित्र न्याय मिला कि बेचारे लाश उठाने वाले गिरफ्तार कर लिये।

गोली चाली थेई मुकती कुशल, ठाव करें, वे राखी, रे.......।
बोचे मोतें रे मुंश्रो दे बिछड़ा, कोमना बे साथी, रे मामा मेरा॥ 84॥

गोलियां बहुत चलीं, पर भगवान ने कृपा की कि मौत के मुंह से बच गए श्रौर बेचारा एक ही साथी कमना बिछुड़ गया।

गोश्रा सोम्वड़ी श्राजादी दी रो ताइने बागी रा तमाशा, रे.......।
पूरी होए गोए तिनो श्राजादी रे, बोयरी री श्राशा, रे मामा मेरा ॥ 85॥

श्राजादी की खातिर बाग़ियों ने जो तमाशा किया था, वह श्रब समाप्त हुश्रा। श्रब श्राजादी के दुश्मनों की श्राशा पूर्ण हो गई।

भागें जुबलों खे एखणो, पाकोड़े एखणो सी घोरे, रे.....।
छूटे पखटो भोरयो एखणो, कोयदे रे डोर रे मामा मेरा॥ 86॥

कोई बाग़ी जुब्बल भाग गए, कोई उनके घरों पर ही पकड़े गए। कुछ ने कैद जाने के डर से पुलिस श्रौर पिट्टुश्रों की जेबें भर कर छुटकारा पाया।

एबे पुलशो रो पिट्ठू रे होवो, श्रापणो वे जाणो, रे.....।
कुटी पिटियो हाथूटे थेयें बुश्रो, खायशों वे घाणो, रे मा मा मेरा॥ 87॥

श्रब पुलिस श्रौर पिट्ठुश्रों की मनमानी हो गई। उन्होंने लोगों को कूट-पीट कर हाथ रजा लिए श्रौर स्वयं भी रिश्वत श्रौर खान-पान से खूब रज गए।

श्राया पुलशो रे हाथो दा सारा, मकदमे रा कामो, रे......।
राखा लीडरो ठाम्बणे खे पांजो, शोए रा इनामो, रे मामा मेरा॥ 88॥

केस चलाने का सारा काम श्रब पुलिस के हाथ श्रा गया था। भागे हुए नेताश्रों की गिरफ्तारी के लिए उसने पांच सौ रुपये प्रति नेता की घोषणा कर दी।

जौमा होश्रा सोवे शाठो रो नोए रा, पाकोड़े जो बागी, रे.....।।
मांज रोणों दी नोहिणी जेलों रे, दालतो वे लागी, रे मामा मेरा ।। 89.

गिरफ्तार किए आन्दोलनकारियों की कुल संख्या उनहत्तर हो गई । अब नाहन जेल के बीच मैदान में सुनवाई शुरू हुई ।

सारजन्टा मियां रतनसिहा कियां कारजोनी चोखा, रे..... ।।
कियां ल्हेश्रोणो खे कागदो बागी रो, आपणे खे धोखा, रे मामा मेरा ।। 90।।

ओ मियां रत्न सिंह, तूने बागियों का जुब्बल से धोखे में रिकार्ड हथिया कर कोई अच्छा काम नहीं, अपनों से धोखा किया है ।

झूठी कागली लखायओं नीता, जुबलों खे छाड़ा, रे.......।
लच्छी रामो ल्हेई रेली दा 'बोइदों' रा, रकारडो तू सारा, रे मामा मेरा ।।91।।

वैद्य सूरत सिंह की तरफ से श्री लच्छी राम और उनकी धर्म पत्नी रेली बहिन के नाम एक झूठा पत्र लिखवा कर नीता राम ब्राह्मण को जुब्बल भेजकर उनसे, उनका सारा रिकार्ड लाने के लिये कहा गया ।

आई एस पीया ईश्वरदासा तेरी, मोरणे री वारी, रे ......।
धारा चों शोए दुई दी लावा, लाए मुश्रां सारी, रे मामा मेरा ।। 92 ।।

एस0 पी0 मेहता ईश्वर दास मुकदमा शुरू होने से सिर्फ एक दिन पहिले मर गया (वर्ना न जाने क्या ग़जब ढाता) फिर भी धारा तीन सौ दो के अलावा बाकी सारी खतरनाक धाराएं वह इस केस में लगा मरा।

धारा एकशौ एक्किश ए दूजी, एक्किश बी लाई, रे........।
बारी एकीशो एक्किशो एक सौ चोवीशो री आई , रे मामा मेरा ।। 93 ।।

धारा एक सौ इक्कीस 'अ' और दूसरी एक सौ इक्कीस भी लगाई । एक सौ बीस 'बी' व एक सौ चौबीस 'ए' की भी बारी आई ।

बाल बच्चे तिनों बागी रे देयो, एस0 पी0 खे लेरो, रे.....।
धारा तीन शौ सात मलायओ, लाई पूरी गेरो, रे मामा मेरा ।। 94 ।।

बागियों के बाल-बच्चे एस0 पी0 को रोते रहे कि, धारा एक सौ सात आदि कुल मिला कर उन पर वह पूरी ग्यारह धाराएं नाफिज कर गया ।

बैठा तेश्रोटें कोरदा ट्रिब्यूनल गौरीप्रसाद जोजो, रे......।
बेईमानी कोरो खुलियो ब्यानी दी, तोबे बी ना रोजो, रे मामा मेरा ।। 95 ।।

ओ गौरी प्रसाद जज, तू ट्रिब्यूनल में न्याय करने बैठा, परन्तु ब्यान संवारने-बिगाड़ने में तूने खुलकर बेईमानी की, पर तब भी तेरा जी नहीं भरा ।

म्हिने पोन्दरो कचहरी लागी, झूठो रा हंगामा, रे......।
हाई स्कूलो रे हालो दा रोचा, फैसले रा ड्रामा, रे मामा मेरा ।। 96 ।।

पन्द्रह महीनों तक, झूठ का हंगामा कचहरी लगी रही । फिर (अमर) स्कूल के हाल में फैसलों का ड्रामा रचा गया ।

जिने मुलको री खातरी देही री, मामता थी गया त्यागो, रे......।
हाथ कोड़ी रो बेड़ी दे न्हिएं, शुणदे सी बागी, रे मामा मेरा ।। 97 ।।

जिन लोगों ने देश की खातिर देह की ममता त्याग कर काम किया, आज उन्हें फैसला सुनाने के लिए भी हथकड़ियां और बेड़ियां पहना कर ले जाया गया ।

बोरी चोउदी, चिई खे दुई-बोरशो री जेलो, रे........।
बाकी बावनी खे बोयारिया टेयां, उम्बरी रा खेलों, रे मामा मेरा ।। 98. ।।

69 में से चौदह साथी बरी हुए, तीन को दो-दो वर्षों की कड़ी कैद सुनाई गई। ओ बेरहम बैरी जज, तूने बाकी बावन साथियों को 'उम्र-कैद' का खेल बना दिया ।

शुना पोड़ा लाका-रोग्रा-ना पाछु, लोछणो रा मांछों, रे........।
लुण्डों-भाण्डोरे घीयो रे बोले, पुलशो रो साथो, रे मामा मेरा ।। 99 ।।

अब पीछे इलाका सूना पड़ गया । कोई काम का आदमी न रहा । लुच्चे-लफंगों के, पुलिस की दोस्ती से घी के दिये जल गए ।

मोदें मियें री घोरटू लूटी, थामले नशा की, रे........।
पोशु चुंचू रा गला बे-रे-राखे, नोजोरी ना बाकी, रे मामा मेरा ।। 100।।

थामला में, लुण्ड पार्टी द्वारा दी गई सम्मति से मियां मदन सिंह का घर बड़े आराम से लूटा गया । मियां चुंचू राम और मियां गुलाब सिंह के पशु लूट लिए गए और उनका बेहिसाब अनाज लूटने में कसर न छोड़ी गई।

मेहरसिंहों रो ओतरे रे दिते, घोरो, दे बंगें डाके, रे......।
गांव पलोई दो लुछेयों न्हियों, चोढ़ी गोश्रो जो हाथे, रे मामा मेरा ।। 101।।

मेहर सिंह और अतर सिंह के घरों में डाके दिए । गांव-पड़ोस में जो उनके हाथ लगा, छीन-झपट के ले गए ।

बागी पान्दे कुटी कुटेयो ल्हेये, देणी खे गवाही, रे ....।
गरीबों गुरबे रे कुड़वें जोये, मचायश्रो तबाही, रे मामा मेरा ।। 102।।

गवाहों को, बागियों पर शहादत देने के लिए मार-मार कर लाया और गरीब-गुरबों के परिवारों को भयभीत किया गया ।

लुटी लटेयो मालोरी रोजको, खाचरो वे लादी, रे . . . . . ।
कियों जिमटी वी जबत पोदमें-कोलीरामो री बादी, रे मामा मेरा ।। 103 ।।

माल को लूट-लूट कर रोजाना खच्चर लाद कर लाई गई । पद्मा राम और कली राम की तो (लूट के साथ-साथ) सारी जमीनें भी जब्त कर लीं ।

चुंचू ग्रोतरे-गला बेरो बोइदो री, जबत किई सारी, रे . . . . . ।
ग्राई मोबे रो मेहरसिंहों री, साथड़िए बारी, रे मामा मेरा ।। 104।।

सर्वश्री चुंचू राम, अतर सिंह, गुलाब सिंह और वैद्य सूरत सिंह की तमाम ज़मीनें जब्त कर लीं, मियां मदन सिंह और मेहर सिंह की भी साथ ही जब्त कीं ।

एवें शुणों तुमे लोकुग्रो तिनो, कोयदी रा हालो, रे . . . . . ।
चाले गोई बेईमानो-कमीणों, चाकरो रीं चालो, रे मामा मेरा ।। 105।।

अब लोगो, तुम उन कैदियों का हाल सुनो। उस बेईमान और कमीनी नौकरशाही की चालें चल गईं (सफल हो गईं)।

डान्डा बेड़ी छोए पौन्डो री बोड़ें-लीडरो बी लाईरे . . . . . ।
चैन रेकै सोबी साथी दी लायग्रो, मशक्कते कराई, रे मामा मेरा ।। 106 ।।

(फलस्वरूप) बड़े लीडरों (जिन्हें वे रिंग लीडर कहा करते थे) को छः छः पौण्ड की डण्डा बेड़ियां डाली गईं । दूसरे साथियों को चेन बेड़ियां डलवा कर फिर मुशक्कतें कराई गईं ।

चाकी पिवणी रोजकी सोलो, कोणको, रे सेरो, रे . . . . . ।
कोबे धोणीए-पिपली पिषदे, छुटो थीबे लेरो, रे मामा मेरा ।। 107।।

सोलह सेर (पक्के) गेंहू रोजाना चक्की में पीसने पड़ते थे—और कभी-कभी धनियां व मिर्चें वगैरह पीसते हुए रोना आ जाता था ।

रोड़ी कुटी सारी नोहिणी कीई, शोड़के ना पाकी, रे . . . . . ।
डाली-छिड़ी ढोई बोणो दी जोमटे रे, कोसरो ना राखी, रे मामा मेरा ।108।

रोड़ियां कूट-कूट कर नाहन की तमाम सड़कें पक्की बना दीं । जमटा के जंगल से लकड़ियां और पशुओं के लिए पत्तियां उठाने में कसर बाकी न रखी ।

लोहू पीयो तिनें माडो णिए साथी, काम्बलो री जूए रे . . . . . ।
छटांको रे राशने भुखे, छोए म्हिने मूएं रे मामा मेरा । 109।।।

जेल के उन खटमलों ने लहू पी लिया, साथ ही कम्बलों की जूंओं ने भी लगातार छः महीनों तक तीन छटांक प्रति कैदी के राशन से भूखा भी मार दिया।

बारी ज्योतिपरशादी दरोगेया, रोहला तू चीते रे ...... ।
दाणे ल्हेंथो करोन्डेयो रे पापीया, खाणी बी नां दिते, रे मामा मेरा ।। 110।।

ओ ज्योति प्रसाद दारोगा, तू उम्र भर याद रहेगा । बेचारे कैदी जंगल से जो करौन्दे के दाने (फल) लाते थे, पापी तूने वे भी खाने न दिए ।

पांचो खाओथिये भुखे सी कोयदी, मिटोथा अरमानो, रे ...... ।
खाणे दिती ना सी बी रे जाल्मा, नीच तेरा कामो, रे मामा मेरा । 111 ।

(जेल सुपरिण्टेडण्ट के लिये कैद के बागीचे से जाने वाली सब्जी के) कैदी पत्ते खाते थे, जिन से (भूख का कुछ) अरमान मिटता था, परन्तु ओ ज़ालिम, तून इतनी नीचता का काम किया कि वे पत्ते भी खाने न दिए ।

जाड़ो सालो पंजतालशो रो पोगड़ी, मुण्डो डी थी कोजा, रे ..... ।
काम्बा बोरड़ा गम्हिरिया शोले, दरोगे रे थी मोजा, रे मामा मेरा । 112।।

सन् उन्नीस सौ पैंतालीस की ठण्ढक सिर पर जाहिर मौत थी । बेचारा गम्हिरिया बरड़ (हरिजन जाति) ठण्ड से कांप रहा था, परन्तु जेल दारोगा के मौज थी (उसका कोई फिक्र दारोगा को नहीं था) ।

तियें बोइदा गम्हिरिए खे कोई, काम्बलो वे मांगा, रे ..... ।
नोखे जुरमो री ताइने खोड़ी.....हाथकोड़ी दा टांगा, रे मामा मेरा । 113।

वैद्य सूरत सिंह, तूने गम्हिरिया के लिये कम्बल क्यों मांगा ? इस अनोखे जुर्म के लिए तुझे खड़ी हथकड़ियों में टांग दिया गया।

एकी म्हिने काली कोठड़ी दा बन्द.... जुलमीएं राखा, रे... ।
रामबणो तिये चाकी री सोजेरा, दुःखड़ा नी भाखा, रे मामा मेरा ।।114।।

एक महीने तक तुझे जुल्मियों ने काली कोठरी में बन्द रखा । राम-बाण कूटने और चक्की पीसने की सजा का तूने जिक्र भी नहीं किया ।

कोरे थाली एबे, 'बोइदे' शुरू भूखो री हड़तालो, रे ....।
आए गोआ तिनो साथी बा चिए, रोषों रां बोआलो, रे मामा मेरा ।। 115 ।।

अब वैद्य सूरत सिंह ने भूख-हड़ताल शुरू कर दी । फिर उनके तीन साथियों को भी गुस्से का उबाल (जोश) आ गया ।

किएं बस्तीरामे पोहाड़िए .... रो गलाबसिंहें, रे ..... ।
साथी भाणाते रे साथियें चिजें, किएं मानसिंहें, रे मामा मेरा ।। 116 ।

सर्वश्री बस्ती राम पहाड़िया और गुलाब सिंह मियां न भी भूख-हड़ताल की, तीसरे, भाणत निवासी श्री मान सिंह ने भी हड़ताल कर दी।

नोम्रा सुपरिन्टेण्डेंट था लागा किशनस्वरूप बाबू रे ......।
कियां चुगलिए ज्योतिपरशादो री, डाहणें खे हागू, रे मामा मेरा ।। 117 ।।

बाबू श्री कृष्ण स्वरूप नए-नए जेल सुपरिन्टेन्डन्ट लगे थे । ज्योति प्रसाद की चुगलियों ने उन्हें निशाना बना लिया ।

सोजा दिती हड़ताली खे बिशो ...बेंतो री करारी, रे.....।
बिना सुंचणे चाली गरीबों रे, गोलो पान्दे आरी, रे मामा मेरा ।। 118।।

हड़तालियों को उन्होंने बीस-बीस बैंतों की करारी सजा दे दी और इस तरह बिना सोचे समझे, उन ग़रीबों के गले पर आरी चल गई।

बोन गिणने गलाबे रो बोस्ती रामो—रे ना जीयो, रे.....।
बिशो बेंतो री बेदणे खायम्रो, किई ना बे सीम्रो, रे मामा मेरा ।।119।।

सर्वश्री बस्ती राम और गुलाब सिंह के दिल धन्य गिनिए कि बीस-बीस बेंतों की दर्द खा कर भी जिन्होंने 'सी' तक नहीं की।

मान सिंह बी भाणते रे लाई, विपते दी काछु रे,.....।
बेंतो कोरडे री बेदणोये बी, रोम्रा नी बे पाछु, रे मामा मेरा ।। 120 ।।

श्री मान सिंह ग्राम भाणत ने भी विपत्ति के लिये कन्धा दिया और करारी बेंतें लगने पर भी साथियों से पीछे नहीं रहा ।

तिनों सोमे री जेलो रे थेये, बोधके बे साके, रे....
एसो पापीए कुड़ बे म्हेन्टणी जोगे ना बे राखे, रे मामा मेरा ।। 121 ।।

उस समय की जेल की परिस्थितियां विचित्र थीं कि, पापियों ने कई लोग (जो जेल में मर गए) परिवार से मिलने योग्य नहीं रखे । वे बेचारे सदा के लिये अपने बाल-बच्चों से बिछुड़ गए ।

दिती कोलिए, विष्णे, कांनिएं, जेलो दी बे जानें, रे.....।
हमे मोहिए देशो री खातरे, काचड़े जवानी, रे मामा मेरा ।। 122 ।।

सर्वश्री कली राम, विष्णा राम और कान्हिया राम ने जेल में प्राण दिए—और श्री महो राम ने देश की खातिर अपनी कच्ची जवानी होम दी।

सभाषो बाबू री फौजीयें किएँ, न्हेसों दे रे दोमो, रे.....।
दोम चुटा बरतानिए राजा भारतो री क़ोमों, रे मामा मेरा ।। 123।।

उधर जब सुभाष बाबू की 'आज़ाद हिन्द' सेना ने भी अंग्रेज़ों के नाक में दम कर दिया और इधर भारतीय राष्ट्रीयता जाग गई तो बरतानिया का दम टूट गया ।

जागो जोबे बरतानिए सर, एटली रो राजो, रे......।
क्रिप्स मिशन भेजेयो दिता, भारतो खेता जो, रे मामा मेरा ।। 124 ।।

जब बरतानिया में सर एटली की सरकार बनी, तो क्रिप्स मिशन भेज कर उसने भारत का ताज (स्वतन्त्रता) दे दिया ।

शुभ घोड़े सन्तालशो रे पोन्दरो अगस्तो रे आए रे,......।
लोंए मुलके आवड़ी रातेरे, आजादी रे जम्हाएं , रे मामा मेरा ।। 125 ।।

सन् उन्नीस सौ सैंन्तालीस के पन्दरह अगस्त की वह शुभ घड़ी आ गई, जब देश ने ठीक आधी रात को आजादी की जम्हाई ली ।

सन छयालशो पेटोदा फिरा, रयासते मरोड़ा, रे .....।
जोत्थो पोलका राजे रे जोलम दिनों पान्दे छोड़ा, रे मामा मेरा । 126।।

सन् 1946 में पहली बार स्टेट के पेट में मरोड़ा (स्वतन्त्रता की हलचलों से घबराहट) उठा और उसने महाराजा के जन्मदिन पर पहला जत्था कैदियों का रिहा कर दिया ।

दुजा छोड़ा सन्तालशे दसम्बरे, तेसीए बहाने, रे ......।
तीन बाकी रोए जेलो दे खाया, पोल्टा जमाने, रे मामा मेरा ।। 127 ।।

दिसम्बर सन् सैंन्तालीस में दूसरा जत्था भी महाराजा के जन्मदिन के उसी बहाने छोड़ दिया । अब केवल तीन कैदी छूटने को बाकी रह गए और अब जमाना पलटा खा चुका था ।

साथी सुरतू रे चेतूरो वोसिये री, हकूमतो थी लागू, रे .....।
गिणो थेयें तिनों डेरे-सनेरे, बोइदो रे बाजू, रे मामा मेरा ।। 128 ।।

वैद्य सूरत सिंह के साथी श्री चेत सिंह और बस्ती राम को, उनके दाएं-बाएं बाजू गिना जाता था, इसलिए हकूमत उन को लागू थी ।

आया सन् अड़तालशो रे मार्चे, मोर्जरो रा रोगो, रे......।
कांग्रेसी री देवी खे चोढ़ा, रयासते रा भोगो, रे मामा मेरा ।। 129।।

सन् उन्नीस सौ अड़तालीस में (रियास्तों में) मर्जर का रोग आया (उसे टालने के लिये) कांग्रेस की देवी के आगे रियासतों का भोग (चढ़ावा) चढ़ गया।

आए ई0 पी0 कृपलानी रो डाक्टर परमारो रो कारो, रे .....।
राजे कियां भाते शाकरेये तोबे, पोरजे रा सतकारो रे मामा मेरा ।। 130।

जब केन्द्रीय सरकार (कांग्रेस) के सचिव श्री ई0 पी0 कृपलानी और डाक्टर श्री यशवन्त सिंह परमार की (मर्जर के लिये देहली से) कार आई, तो महाराजा ने लोगों

का मर्जर से बचने में खुश करने के लिए हजारों की संख्या में बुला कर) खूब शक्कर-भात (बकरे) खिलाकर सत्कार किया ।

खाड़ू बाकरे काटेयो वी किर्वी पोरजेरी सेवा रे .....।
फावे जाला जाणो, वो चलो राजो सेवेरा वे मेवा, रे मामा मेरा ।। 131 ।।

खाड़ू, बकरे काटकर भी प्रजा की सेवा की कि शायद सेवा से मेवा मिलेगा और राज्य बच जायगा ।

जोवे मोर्जरो री श्रोवलो राजे रे, गोलो वी वे फाथी रे .....।
एकी होपते पोहिलें छोड़े सी वोइदो रो साथो, रे मामा मेरा ।। 132।।

मर्जर की बला जब महाराजा के गले में फंस गई, तब कहीं उससे एक हफता पहले उन्होंने वैद्य सूरत सिंह और उसके साथियों को (आखरी जत्था) रिहा किया ।

पांजो सालो रे बिछड़े माए बापों रे सी बेटे, रे ....।
आए जोवे लोके स्वागत किए मीठी प्यारो रोए भेंटे, रे मामा मेरा ।। 133 ।

पांच सालों से मां-बापों से बिछुड़े वे बेटे, जब रिहा होकर आए, तो लोगों ने प्यार की मीठी भेंटों से उनके स्वागत किए ।

आमें-बापू फावे बिछड़े बेटे कियों पत्नी ए पूजा, रे .....।
भाई बोहणिये छेड़ए देखा, जोलमो ए दूजा, रे मामा मेरा ।। 134।।

मां-बापों को अपने बिछुड़े पुत्र मिले, उनकी पत्नियों ने उनकी पूजा की और उन कैदियों के भाई-बहिनों व बच्चों ने उनका जीते जी लौटना एक प्रकार से दूसरा जन्म होने जैसा देखा ।

तेरी नारणा वोदकी श्रोसो, किरपे रे माया, रे ....।
भेये गोए न्हेरे-रातटी चिटा दिनड़ू वे आया, रे मामा मेरा ।। 135 ।।

भगवान्, तेरी कृपा की विचित्र माया है । अब अन्धेरी रात खुल गई और प्रकाशवान् दिन आ गया है ।

खुशी मनाएं लोके डोटेयो खाश्रो, सिड़कू रो धीयो, रे ......।
रोमे गोए आजादी रे मेले दे, आजादी रे सो जीयो, रे मामा मेरा ।। 136 ।।

लोगों ने खुशियां मनाई और उनमें पहाड़ों का प्यारा-प्रसिद्ध भोजन 'घी और सिड़कू' खाया । फिर वे स्वतन्त्र वातावरण में पले जीव पुनः आजादी के मेले में रम गए ।

—अध्यक्ष,
हिमाचल राज्य खादी व ग्रामोद्योग बोर्ड, शिमला ।

पहाड़ी पक्षियों की नामावली और उन सम्बन्धी उक्तियां

—एम० आर० ठाकुर

स्थानीय लोक-श्रुति के अनुसार जब विधाता ने पक्षियों को बनाया तो अन्त में उसके सामने समस्या खड़ी हुई कि इन सब पक्षियों का राजा कौन हो जो पक्षी-समाज को चला सके और जिसका आदेश सब को पालनीय हो। तब उसने एक ऐसा पक्षी बनाया जिस में संसार के सब पक्षियों के परों और अंगों के कोई-न-कोई भाग भर दिए, और उसका नाम रखा जीजूराणा। परन्तु इस प्रयत्न में वह ऐसा भद्दा बना कि कोई भी उस को राजा मानने के लिए तैयार न था, और आज भी जीजूराणा दस हजार फुट से ऊपर घने जंगलों में अकेला रहता है। दूसरे पक्षी इस से दूर भागते हैं। जीजूराणा की यह हालत देख कर मनाल (सं० मृणाल) पक्षी ने, जो सब से सुन्दर है और जिस की कलगी आज भी हमारी टोपी की शोभा बढ़ाती है, अपने आप पक्षियों के राजा होने की घोषणा की और भगवान की अध्यक्षता में हो रही पक्षी-सभा से उठ खड़ा हुआ। भगवान को यह पसन्द नहीं था और उन्होंने पीछे से उसके ऊपर राख-भस्म की मुट्ठी दे मारी। यही कारण है कि मनाल पक्षी का सारा शरीर सुन्दर और चमकीला होने पर भी उस की पूंछ के ऊपर सफेद धब्बा है। मनाल पक्षी अपनी धृष्टता में सफल न हो भगवान ने उस की पत्नी करड़ी को उतना ही भद्दा और बदसूरत बनाया जितना मनाल सुन्दर है। जब भगवान ने पक्षियों के नेता और नाम करण का विषय पक्षी और मानव-समाज पर छोड़ा।

उपर्युक्त अनुश्रुति को छोड़ते हुए भी हम जानते हैं कि समाज में नामकरण का विषय अत्यन्त रोचक और मनोवैज्ञानिक है। नामों का अध्ययन अपने-आप में मनोरंजक होने के अतिरिक्त यह जाति या देश-प्रदेश विशेष के ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक परम्पराओं पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश डालता है। नामों के अध्ययन से उस जाति या प्रदेश की भाषा, नृविज्ञान, जाति-मिश्रण और संस्कृति जैसे महत्त्वपूर्ण विषयों की खोज में सहायता मिलती है। हिमाचल प्रदेश के बहुत से साधारण पक्षियों के नाम सर्व-सामान्य हैं जैसे मोर, तोता, मैना, तीतर, बतख, कोयल, बाज आदि। यहां कुछ नामों में सामान्य ध्वनि परिवर्तन आया है, जैसे काओं, कौ, कौउआ या काउड़ा, (सं० काक) हिंदी कौवा के लिए, शुगा, शुगा, सुग्गा (सं० शुक) के लिए। यह तोता नहीं होता है, जैसा कि कुछ लोगों का विचार है। तोता के स्कंध पर मेरून धब्बे होते हैं और गले के चारों ओर चमकीला पीला कालर होता है। ये दोनों विशेषताएं शुगे में नहीं होती। इस से भी बड़ी भिन्नता यह है कि तोते को मानवी

भाषा सिखाई जाती है, जिसे स्थानीय लोग शुगा कहते हैं वह कभी मनुष्य की बोली नहीं बोल सकता । शुगा के झुण्ड के झुण्ड सेवों की फसलों को बरबाद करते हैं । मुर्गा सारे हिमाचल में प्रायः कुकड़ या कुक्कड़ (सं0 कुक्कुटः) नाम से अधिक जाना जाता है । बच्चों को कुक्कुड़ू और मादा को कुक्कड़ी कहते हैं । संस्कृत शब्द श्येन से कुलुई नाम शीण पड़ा है; जो शीण आकार में छोटी हो उसे ईण कहते हैं, परन्तु हिमालय के शेष स्थानों पर श्येन को ईण नाम से ही अधिक जाना जाता है । चिल्ल या चील को पहाड़ों पर ईल (कांगड़ा, महासु) या इलकण (कुलुई) कहते हैं । गीध या गिद्ध, को गीज, गिरजणी, लुद्धी नाम से जाना जाता है । पपीहा या इसी नाम से पुकारा जाता है, या कुछ स्थानों पर ध्वनि-विकार के कारण पीऊ अथवा बंबिया, पीहू, पैंयाऊ, खेपा, नाम से जाना जाता है ।

नामकरण की कई दिशाएं रही हैं, परन्तु पहाड़ी पक्षियों के नामों को निम्नलिखित पांच शीर्षकों में देखा जा सकता है, अर्थात् ध्वनि, कार्य, ऋतु, आकार तथा निवास के आधार पर ।

ध्वन्यात्मक

प्रायः बहुत से पक्षियों के नाम उनकी ध्वनि के आधार पर रखे जाते हैं । चकोर को कां0 चकोर, कु0 चाकर, सि0 चाकुरा, म0 चाकरा कहते हैं । यह उसकी ध्वनि के आधार पर है । श्रुति है कि एक बार चकोर पक्षी तीतर के घर मेहमान गया । तीतर ने उस की खूब आव-भगत की । फिर कभी तीतर चकोर के यहां गया और चकोर ने अनजानी का बहाना बनाया और पूछा "ककर-कौकर-कौखर- कोखरा-क्रोखरा" (जो इसके बोल हैं) अर्थात् कहां का, कहां का! तब तीतर ने उत्तर दिया "तिरक-तिरक- तितरी, खाई पटाढुई बिसरी" (तीतर की अनुकरणात्मक ध्वनि) अर्थात् तीतर हूं तीतर! जिसे तुम खा-पीकर भूल गए । ध्वनि के आधार पर दूसरा नाम कूही का है । यूं यहां सं0 कोकिला का तदभ्व रूप है-कोकिल> कोयल> कोइल कोइअ> कूई> कूही, परन्तु यह मैदानों में और कांगड़ा क्षेत्र में पाई जाने वाली कोयल नहीं है । इस की ध्वनि कोयल से भी अधिक मीठी होती है और देर तक बोलती है- कू SSS ई-कूई-कु-कु- कुइई-कुई । इसे कल्हाड़, कोइलाड़, कलचेउट, कोलाड़ भी कहते हैं । एक छोटा सा पक्षी और है जो फिचू-फिछू करता है इसे फिंफिचू या फेंचा कहते हैं । इसी से कुछ बड़ा पक्षी शिकपिकलू कहलाती है ।

घुघी को प्रायः सभी स्थानों पर घुघती कहते हैं । जब यह बोलती है तो शरीर को आगे-पीछे हिलाती है । इसी के नाम पर प्रसिद्ध लोक-नाच 'घुघती-घुर' प्रचलित है परन्तु वास्तव में यह नाचती नहीं है । पश्चाताप करती है—लोकोक्ति है कि एक बार घुघती ने अपने पुत्र के पास धान कूटने को दिया । जब पुत्र चावल लाया तो टांकरा आधा था । घुघती ने पुत्र को पीटा और इस पिटाई में उसकी मृत्यु हो गई । घुघती चावल लेकर ऊखल के पास गई और छिलके देख कर जब सब को जांचा तो उसे अपनी भूल मालूम हो गई और रोती हुई कहने लगी, "घुघती घुर-घुर-घुर,

उठ पुत्रा पौधा पुर-पुर" अर्थात् धुर-धुर (जो उसकी ध्वनि है) उठ पुत्र पत्वा पूर्ण हो गया है । अब पश्चाताप के लिए 'पौधा पुरणो 'मुहावरा बन गया है ।

कठफोड़ा से अभिप्राय वह पक्षी है जो काठ या लकड़ी को फोड़ता-तोड़ता है। संक्षिप्तिकरण से सिरमौर और साथ लगते क्षेत्र में इसे कठेड़ भी कहते हैं । कांगड़ा में इसे ठठियारा भी कहते हैं । यहां ध्वनि की अपेक्षा कार्य अधिक व्यापक है । परन्तु चूंकि यह अपनी चोंच से वृक्षों के तने पर 'टुक-टुक' की आवाज करता है, इसी लिए ध्वनि के आधार पर कुलुई में इसे टुटलू कहते हैं । इसी की एक किस्म अधिक छोटी परन्तु लम्बी पूंछ वाली होती है । उसे सुरख टुटलू कहते हैं । इसी जाति का एक और पक्षी है जो तीतर से कुछ छोटा होता है और शिकार के लिए मारा भी जाता है, इसे घरोवण कहते हैं, क्योंकि यह घन की तरह जोर से मार करता है । कबूतर घूं-घू की ध्वनि करता है, इसलिए इसे अधिक उपयुक्त रूप से घुघु या घूघू कहा जाता है ।

कार्यात्मक

कुछ पक्षियों के नाम काम के आधार पर रखे गए हैं। भेड़ों के साथ एक मादा-पक्षी प्रायः साथ रहती है । जब गद्दी या पुहाल ऋतु परिवर्तन के साथ-साथ लाहुल, चम्बा जैसे स्थानों पर भेड़ें ले जाते हैं तो यह साथ चलती है । जब पत्थर पर बैठ कर 'टी-टी' बोलती है तो सिर ऊपर-नीचे हिलाती है । कहते हैं अब यह भेड़ें गिन रही है । इसे भेड़-चिड़ी कहा जाता है । इसी प्रवृत्ति का और पक्षी होता है, जो ऐसे बोलता है मानो सीटी बजा रहा है। इस की सीटी पुहाल की सीटी की तरह होती है जो वह भेड़ें इकट्ठा करते हुए बजाता है । इसे पुहालची नाम से पुकारा जाता है । विश्वास है कि यह दोनों पिछले जन्म में पुहाल-गद्दी थे ।

चील के रूप का एक पक्षी है । आकार में चील से छोटा होता है । वह ऊंचा उड़ कर देर तक वायु में बिलकुल स्थिर खड़ा होता है । मानो कोई कपड़ा एक जगह पड़ा है । कहते हैं तब यह बागर (सं० वायु) पोक (सं० प्रयोग) कर रहा है । अतः इसका नाम बागर-पोक है । तालाबों, जौहड़ों या नदी के किनारे लम्बी सी चूंज (सं० चञ्चु) वाली चित्रित पक्षी होती है। यह पत्थरों या चट्टानों पर गीली मिट्टी ला-ला कर बढ़िया कोल्ह सं० कुलाय बनाता है, मानों किसी चतुर कुम्हार (सं० कुम्भकार) ने घड़ा बनाया हो । यह मछलियां या कीट आदि पकड़ने के लिए चुपके से बैठी रहती है, मानों आंखें मीचे हुए है। इसे काणी-कम्हारण कहते हैं । जहां कौवा हो वहीं एक दूसरा पक्षी भी साथ होता है, जो काला नहीं बल्कि भूरे रंग का होता है । चोंचें किंचित भूरे रंग की होती हैं । इस का सम्बन्ध वर्षा से जोड़ा जाता है । यह तभी बोलती है जब वर्षा आनी हो, जैसे यह वर्षा का बैरोमीटर हो। यह बोले तो कहा जाता है कि वर्षा आएगी । अतः इसे घटारी (घटा से) कहते हैं । शटाई, सिरयाइटी, किछराई, शियारी इसके अन्य स्थानीय नाम हैं ।

घास पर एक छोटा सा पक्षी रहता है जो बारीक पत्तियों से अपने घोंसले बनाता है, जैसे सीउण सं० सूचिका से घौर (सं० गृह) बनाया हो, इसे इसीलिए घौरसिउण, घरसीउण. या घुर सीउण कहते हैं । रात खुलने से भी पहले एक पक्षी सब से पहले बोलता है। कहते हैं, विधाता ने उसकी डियूटी मनुष्य को उठाने के लिए लगाई है। वह सवेरे ही इसे तिर> सं० द्वारिका, गुहाड़ (खोल) इसे तिर गुहाड़ (ताकी खोल) नाम दिया गया है। पिहू को प्रायः कठोहल पिहू कहते हैं । जन-श्रुति है कि यह सब से बड़ा पक्षी था, और इस ने अभिमान से कहा कि मैंने आकाश थाम रखा हैं । इस पर विधाता ने उस को ऐसी लात मारी कि लकड़ियों के ढेर 'कठौहल' से गुजार दिया । तभी उस का शरीर इतना छोटा हो गया । सर्दियों में कुछ चिड़ियां समूह में उड़ती है और समूह में ही बैठती हैं इन्हें गुटेउड़ी सं० गुट-उड्डयन, या गरेउड़ी अथवा घरेउड़ी कहते हैं ।

ऋतुपरक

कुछ पक्षी केवल ऋतु विशेष में दीखते है । ऋतु समाप्त होने पर वे लुप्त हो जाते हैं । नया वर्ष आरम्भ होने पर बसन्त में घुग्घी के रूप का पहला पक्षी नौई चिड़ी या नूई चिड़ी के नाम से प्रसिद्ध है । इस की पहली ध्वनि सुनने को लोग बड़ा महत्त्व देते हैं और जिस दिन उसे सब से पहले सुने उस दिन कोई मीठा भोजन खाते हैं, अच्छा काम करते हैं, किसी से लड़ाई झगड़ा नहीं करते । विश्वास हैं कि जिस स्थिति में इसे पहली बार सुना जाए, सारा वर्ष वैसे ही बीतता है। अतः नंगे सिर, बिना कुछ खाए या शौच जाने पर इसे पहली बार सुनना शुभ नहीं माना जाता। बसन्त के आरम्भ में ही छोटी-छोटी चिड़ियां बर्फ के बाद खतों पर उड़ती हैं । इन्हें हिउंद छुट्टी<सं० हेमन्त समाप्तम् कहते हैं । बसन्त के समाप्त होते होते जब जौ पकते हैं, तो जौ के सत्तु बनाए जाते हैं उसी समय शाढ़े (खुरमानियां) पकती हैं । लोग सत्तु को खुरमानी के साथ खाते हैं । इन्ही दिनों एक नया पक्षी निकलता है । इसे सौतु-शाढ़ा कहा जाता है । यह प्रायः बोलती भी ऐसा ही है । ठीक इसी के साथ एक दूसरा पक्षी भी साथ-साथ बोलता है । जब एक बंद होता है तो दूसरा बोलता है । दूसरे का नाम घौरठ पिशु (घराट में पीसा) है। एक पूछता है "सतू-शाढ़े हो गए" । दूसरा उत्तर देता है "घराट में पीसने दिए हैं"। कुछ क्षेत्र में इन्हें पूर्बू चिड़ी कहा जाता है, अर्थात् जो पक्षी पूर्व से आया है । बरसात में उल्लू की शकल का पक्षी दिखाई देता है । वर्षा हो रही हो तो यह घनी शाखाओं में खामोश खड़ा रहता है। इसे खरूहड़ी कहते हैं । जब पतझड़ आता है तो खुरमानियों के वृक्षों पर, जब सारे पत्ते और फल गिरे होते हैं, बिना पत्तों की छोटी-छोटी शाखाओं की गुच्छियां निकलती हैं, उनमें छोटे छोटे दाने निकलते है, जिन्हें रीणी कहते हैं इनका रस लेसदार होता है । दानों को खाने के लिए कबूतर की शकल का, परन्तु छोटा, पक्षी निकलता है इसे झिरझियारा कहा जाता है। यह नाम उसकी ध्वनि के कारण है । सर्दी आरम्भ होने से पूर्व हुदहुद का समय है, इसे स्थानीय बोली में हुतहुत, हुतहुता कहते हैं । बरसात के अन्त में एक बड़े शरीर की चित्रित चिड़िया निकलती है इसे छिछ्ल कहते हैं ।

रूपाकारात्मक

कुछ पक्षियों के नाम उन के रूप और आकार के आधार पर प्रचलित होते । लाल चिड़ी, हौरी चिड़ी, पीउली चिड़ी, शेती चिड़ी, आदि चिड़ियों के रंग के अनुसार नाम होते हैं । कुछ पक्षियों के साथ रंग विशेष जोड़ करके दूसरा नाम जोड़ा जाता है । प्रायः देखने में आता है कि कौवे को उतने ही काले रंग की परन्तु बारीक सी बहुत लम्बी फिजटी या फुंचट< सं0 पुच्छ वाली चिड़िया सताती रहती है । कौवा तेज उड़ नहीं सकता, न तो शाखाओं में जा सकता है । अतः कुछ देर के बाद थक कर बैठ जाता है । तब यह चिड़िया जिसे काली झींची कहते हैं, दूर से उड़ती हुई आकर उसे बार बार चोंच मारती है और कौवा केवल कड़ां-कड़ां करता रहता है । काली झींची को झींझीची भी बोलते है । श्रुति है कि किसी समय कौवे ने इसे ठगा था और इसलिए यह अब उस से अपना टक्का मांगती है । अब यदि कोई व्यक्ति किसी चीज को लेने के लिए हठ करता है तो उक्ति प्रसिद्ध है 'झींझींची रा टक्का दे ।' आकार के आधार पर सब से छोटी चिड़िया को, जो घरों की छत्तों और दीवारों पर उड़ती फिरती है, जाइंडू कहते हैं । यह पक्षी एक जगह घड़ी भर भी नहीं बैठता, हमेशा उड़ता रहता है । अतः जब कभी किसी व्यक्ति को अनावश्यक तकलीफ हो तो कहा जाता है-पिट्टू पिट्टी रा ब्याह जाइंडू उडाए मनींजा (पिट्टू और पिट्टी का विवाह जाइंडू यूंही बिना नींद के) । चील की जाति का एक अन्य पक्षी है जिसका रूप कलछी की तरह होता है इसका अगला शरीर बड़ा और गोल और पीछे समान रूप से पतला परन्तु लम्बा होता है । इसे डोई फिंडी कहते हैं ।

काले रंग के पक्षियों में एक का नाम कलेउट या चकलेउट भी है । कुलुई में इसे कालाइड़ या काली वाड़याइड़ कहते हैं । यह सब से प्रातः उठने वाले पक्षियों में से है । यह दो तरह से बोलती है । उड़ते हुए लम्बी टी-टी की ध्वनि करती है। परन्तु प्रातः ही सब से पहले उठ कर एक सांस में लगातार बहुत कुछ बोलती है । यूं लगता है जैसे कोई अपनी आप-बीती सुना रहा है। स्थानीय अनुश्रुति के अनुसार एक दूसरी चिड़िया शिरपलिशी इसकी सौंकण अर्थात् सौत है, और सवेरे उठ कर इसी का बखेड़ा करती है । कहती है "शिरपलिशी री शोहरी सुती डंदी-सुती डंदी - सुती हुंदी; मेरी शोहरीए आग जाली बुहार शुंघी, पाणी आणू, रोटी पकाई, मौल, खोलू. . . . ." अर्थात् शिरपलिशी की लड़की सोई हुई रहती है और मेरी लड़की ने कितने ही काम किए-आग जलाई, झाड़ू दिया, पानी लाया रोटी पकाई आदि ।

निवास विषय

चमगादड़ चूंकि दिन को छत्त आदि के साथ चिपक कर रहता है। इस चिपकने के अर्थ में ही इसे चमचेड़, चमकादड़ या चमगेरू नाम से जाना जाता है । कुलुई में इसका नाम काठचमेड़ा (काठ में चिमड़ा हुआ) है । इसी की किसम का एक दूसरा पक्षी होता है जो रात को बागीचों में फलों पर आक्रमण करता है, परन्तु दिन को अंधेरे स्थानों पर टहनियों आदि में लटक कर बैठता है । उलटा लटका

होने के कारण इसे उम्बला काग्रो या पुठकाग्रो (उलटा कौवा) कहते हैं। चूंकि यह अन्धेरे में रहता है, अतः कुछ क्षेत्रों में इसे ग्रांधू भी कहते हैं। ग्रांधू नाम उल्लू के लिए भी प्रचलित है, परन्तु इस का अधिक प्रचलित नाम बुंगू या उजड़ू है। उजाड़ स्थानों में रहने के कारण उपरोक्त नाम का प्रचलन है।

नदियों के साथ-साथ ऊपर नीचे उड़ती हुई एक काले से शरीर की चिड़िया देखने में ग्राती है। इसका सिर कदरे लाल रंग का होता है ग्रौर सिर की चोटी पर सफेद धब्बा होता है। इससे नौई चिड़ी "नदी-चिड़िया' कहते हैं। कौवे वे मिलता जुलता एक अन्य पक्षी भी घरों ग्रौर वादियों के निकट देखने में ग्राता है। कदरे लाल चोंच, भूरी गर्दन ग्रौर छोटे ग्राकार से इसे दूसरे कौवों से पहचाना जा सकता है। इसे लाहुली काऊ कहते हैं, क्योंकि यह लाहुल से ग्राया बताते हैं। कहते हैं कि जब यह पहली बार ग्राया तो छिछल के यहां मेहमान बन कर ठहरा। जब उसे भोजन दिया गया तो एक ही समय एक पत्था (लगभग 16 छटांक) की खिचड़ी ग्रौर सेर भर घी खा गया। तब छिछल ने कहा—

लाहुल काऊ रिऊं-झिऊं
पौथा खिचड़ी सेर घिऊ।

इस से कौवा बड़ा शर्मिन्दा हुग्रा ग्रौर वहां से भागने में ही भलाई समझी। छिछल ने कहा 'कहां को चले हो तो लाहुली कौवे बाहर लगा है बर्फ'—

कौ-बे चोलू डे लाहुल काउग्रा, बाहर लागा हिऊं।

ग्रौर उसने बहाना बनाया—

चुप बैशो जंग-बड़ेंगिए, डौकिया ग्राणाना चिऊं।।

'चुप बैठ उलटी-सींदीए, पकड़ के लाऊंगा पक्षी'। छिछल को 'बेडौल शरीर वाली' कह कर भाग गया।

बड़ी-बड़ी झाड़ियों के बीच भूरे से रंग की छोटी चिड़िया ग्राम देखने में ग्राती है। झाड़ियों में रहने के कारण इसे झांखड़ी या भाखड़ी कहते हैं। इसका दूसरा नाम फनियाहड़ी है 'जो 'पनिहारिन' शब्द का विकृत रूप है। कहते हैं कि यह पिनिहारिन थी। एक दिन मालिक ने उसे ग्रठारह घड़े पानी के लाने के लिए कहा, ग्रौर जब वह न ला सकी तो उसे मार कर ग्रठारह घड़े पानी में पकाया। ग्राज कल जब दाल या सब्जी में पानी ग्रधिक हो तो लोकोक्ति प्रसिद्ध है—'एक फनियाहड़ी ठारे घड़ोलू पाणी'।

यह हिमाचल प्रदेश के कुछेक पक्षियों का साधारण सा परिचय है। कृषि प्रधान देश में पक्षियों की भूमिका का विशेष महत्त्व है। ये कृषकों के शत्रु कम मित्र ग्रधिक हैं। जहां हिमाचल प्रदेश ग्रपनी सांस्कृतिक परम्पराग्रों ग्रौर प्राकृतिक सौंदर्य के लिए प्रसिद्ध है, वहां पक्षी, समाज का भी इस में बहुमूल्य कोष है, जिसकी ग्रोर विशेष ध्यान की ग्रावश्यकता है। पक्षी ज्ञान सम्बन्धी शब्दावली ग्रौर लोकोक्तियां भाषा-विज्ञान ग्रौर शब्दकोषीय ग्रध्ययन के लिए महत्वपूर्ण विषय है। प्रदेश के बहुत सारे पक्षियों के नाम नहीं हैं। यह जरूरी है कि ऐसे पक्षियों के नाम घड़े जाएं, जो न केवल पक्षियों की पहचान के लिए जरूरी हैं, वरन् पहाड़ी ग्रौर हिन्दी भाषा के लिए भी इनसे भारी योगदान मिलेगा।

—स्टावर हिल शिमला-2।

महासू

—सी० आर० बी० ललित

सदियों पहले की बात है काश्मीर में देवता महासू राज्य करते थे। वे चार भाई थे, बोठा, बाशिक, पबासी और चालदा। वे श्रीनगर स्थित अपने महल में वैभवपूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। उनके बाईस मंत्री थे जिनमें प्रमुख था कौलू (शायद वर्तमान कौल ब्राह्मणों का पूर्वज) एवं अन्य थे छोड़कुलिया (एक आंख से काना) इत्यादि। महासू देवता मानव की छाया तक का स्पर्श अपने साथ नहीं होने देते थे, छूना या बात करना तो दूर रहा क्योंकि वे अपने देवत्त्व को अक्षुण्ण बनाए रखना चाहते थे।

गढ़वाल (उत्तर प्रदेश) का राजा उस समय सधरेटा (शायद सिद्धार्थ) था। वह महासू देवता का उपासक था और कुल देवता को प्रसन्न करने के लिए उसने अपनी राजधानी का नामकरण श्रीनगर (वर्तमान पौड़ी गढ़वाल) में किया। उसके सात रानियां थीं किन्तु किसी से भी पुत्र–रत्न की प्राप्ति न हुई जो कि उसके विशाल साम्राज्य का उत्तराधिकारी बन सकता। सातवीं रानी प्रखर-बुद्धि की युवती निकली। विवाह के पश्चात् जब राजा के वार्धक्य को उसने देखा तो रोने लगी और कहा कि उसे इस वृद्धावस्था में विवाह करने की क्यों सूझी। राजा ने अन्य रानियों के बांध्यपन की बात उससे कही। रानी की तीक्ष्ण बुद्धि ने निःसन्तान राजा की सभी रानियों के बांध्यपन के रहस्य को भांप लिया और बोली—

तेरं भी औ देशौ रा हैम्रौ जांणू ना भंभ्रौ
कुण ईथुम्रा ठाकरौ कुण कुलौ रा देभ्रौ।

(तेरे देश के आन्तरिक रहस्य मुझे मालूम नहीं कि कौन से कुल का यहां राज्य है और कौन तुम्हारा कुल देवता?)

राजा ने उसे बताया :

मेरं भी औ देशौ रा भौइता हैभ्रौ भंभ्रौ
सधराटा औसौ ठाकरौ महासू कुलौ रा देभ्रौ

(मेरे देश के विषय में बहुत लम्बी-चौड़ी जानकारी है किन्तु तेरे प्रश्न के उत्तर में मैं केवल इतना ही कहना उचित समझता हूं कि यहां पर सधराटा कुल का राज्य है और महासू हमारा कुल–देवता।)

रानी, जो कि महासू देवता की स्वयं भी उपासक थी, बोली :

सौंएं सिरिनगरौ तेरं सुनं केरी खेरौ
महासू केरो बंध छाड़े कोदठा भरी सेरी।

[हे राजा! तेरे समतल श्रीनगर (राजधानी) में सोने की लड़ियां झूलती हैं किन्तु श्रद्धा के तौर पर तू महासू देवता के नाम पर मंडवे का एक कच्चा सेर भर आटा बंधेज के रूप में रख ले और तेरा मनोरथ पूर्ण होगा।]

छोटी रानी को जब पता चला कि राज्य का एक ब्राह्मण जिसका नाम हूणा था, महासू देवता की शरण में देवलोक काश्मीर को पुत्र का वर मांगने गया हुआ था, तो उसने बूढ़े राजा से सविनय अनुरोध किया कि वह भी काश्मीर जा कर महासू देवता की मनौती कर उससे संतानोत्पत्ति का वर मांगे, कुल का दीपक जलता रहे। इस आशय से वृद्ध राजा बंधेज के रूप में रखे सेर भर मंडवे के आटे को लेकर पैदल ही काश्मीर के लिए रवाना हुआ, यह फैसला कर कि यदि वापस लौटा तो पुत्र का वर लेकर ही लौटेगा नहीं तो रास्ते में ही वह मर-खप जाएगा।

अनेकों दिनों की पद-यात्रा के बाद रास्ते में राजा को हूणा ब्राह्मण लौटते हुए मिला। राजा को देखकर हूणा ने कुशल क्षेम पूछने के बाद राजा से पूछा:

किदा चाला साधटुआ हाड़ौ केरे जाटौ।

[हे सवरेटा! तू अपने अस्थिपंजर को ले कर कहां चल पड़ा? रास्ता तो दीखता नहीं तेरी अंधी आंखों को]। प्रत्युत्तर में राजा बोला:

देओ दाड़ै महासू रो बंधौ छाड़ो बंधौ
अन्न धन्न मुकतो साहेबा बेटा भाजो हंदो।

(देवता महाराज महासू का बंधेज रखा है बंधेज (कहीं यह मत समझना कि धन दौलत के लालच से) अन्न धन एवं ऐश्वर्य के अन्य साधन तो मेरे यहां बहुतायत से उपलब्ध हैं किन्तु संतान के लिए तरस रहा हूं और पुत्रोत्पत्ति होती ही नहीं)।

चलते चलते राजा सवरेटा काश्मीर पहुंच गया एवं श्रीनगर स्थित महासू देवता के मंदिर अथवा प्रासाद तक जैसे तैसे पहुंचने में सफल हुआ। राजा की दशा चलते चलते काफी बिगड़ चुकी थी, दाढ़ी बढ़ी हुई, पैरों में छाले और सूजन एवं शरीर थकान से चूर चूर हो गया था। किसी प्रकार, कई दिनों के अनथक प्रयास के बाद वह महामंत्री कौलू को अपने पक्ष में करने में सफल हो सका। वह देवता महासू के साक्षात् दर्शन कर उससे वर मांगना चाहता था किन्तु अड़चन यह थी कि देवता मनुष्य की गंध दूर से ही पा लेता था और मानवछाया से भी वह अपने आप को अपवित्र नहीं करना चाहता था। कौलू को राजा का बुढ़ापा और दयनीय दशा देख कर उस पर दया आ गई और नाग चौथ के दिन देवता के साक्षात दर्शन करवाने का वचन राजा को दे बैठा।

महासू देवता केवल नाग चौथ के दिन सार्वजनिक स्नान के लिए पालकी में बैठ कर प्रासाद से बाहर निकलते थे। पूरे वर्ष में केवल एक यही दिन था जबकि राजा को उनके साक्षात दर्शन का अवसर मिल सकता था अतएव कौलू ने राजा को देव दर्शन हेतु उस

दिन तक रुकने की सलाह दी। नाग चौथ के रोज कौलू ने राजा सधरेंटा को किसी प्रकार किले के भीतर पहुंचाया और महासू की पालकी के बाहर निकलने के मुहूर्त से पूर्व धूप धुपावल के अवशेष (क्षार) फैंकने के स्थान पर राख और कोयलों के बीच दबा दिया तथा कहा कि जब पालकी मुख्यद्वार से बाहर निकलेगी तो वह (कौलू) राख में छड़ से छेड़ करेगा और उस समय राजा उठ खड़ा होवे और देवता की पालकी के दर्शन करे उससे कामनासिद्धि के लिए वर मांगे।

जब महासू देवता के स्नान हेतु प्रस्थान का मुहूर्त आया और मंदिर का मुख्यद्वार खोला गया तो महासू देवता को मानव गंध आने लगी। उसने कौलू को आज्ञा दी कि वह बाहर जा कर देखे कि कोई मानव तो कहीं छिपा नहीं है। कौलू ने बाहर सारे क्षेत्र का निरीक्षण किया और महासू को सूचित किया कि बाहर मानव तो क्या कोई अन्य प्राणी भी प्रभात के इस प्रहर में दृष्टिगोचर नहीं होता। किन्तु देवता को तो मानव-गंध किसी मनुष्य की उपस्थिति का पूर्वाभास करा रही थी अतः उसने यह सोच कर कि शायद कौलू कहीं किसी कारणवश उससे वास्तविकता छुपा रहा है, जिसका कि उसके हाव-भाव देख कर देवता ने अध्ययन कर लिया था, शेड़कुलिया को बाहर भेजा। शेड़कुलिया काना तो पहले ही था, राख के ढेर में छिपे राजा की भनक न पा सका और वह भी वही रिपोर्ताज लेकर भीतर आया जो कि कौलू ने दी थी। सही मुहूर्त पर देवता की पालकी जब बाहर चली तो मुख्य द्वार पर पहुंच कर फिर महासू को अधिकाधिक गंध आती और पालकी वापस हो जाती। अन्त में कौलू ने कहा कि आप देवता और राजा यों ही सनकी हो जाया करते हैं, स्नान का मुहूर्त समाप्त होता जा रहा है, शीघ्रता करें नहीं तो अनर्थ हो जाएगा और बल पूर्वक पालकी को मुख्यद्वार के बाहर खींचा।

पालकी के बाहर निकलते ही कौलू ने राख के ढेर में छड़ी से छेड़ की और भस्मी-भूत हुआ राजा उठ खड़ा हुआ। उस ने देव चरण स्पर्श कर अपना रोनाधोना शुरू किया। देवता ने उस से मंतव्य पूछा तो उसने अपनी विपदा बखान की :

बोठैं दाड़ा महासुआ तेरो छाड़ो बंधौ
अन्न धन मुकतो साहेबा बेटा भाजो हुंदो।

(हे बोठा महासू महाराज तेरा बंधेज रखा है। अन्न धन की कोई कमी नहीं किंतु मात्र पुत्र की अभिलाषा है)।

देवता बोला:

सौंऐ सिरीनगरौ तेरैं गगली रैं नागो है
शुकै रूखौ दैं साधरूआ लागदे नी टोहे।

(तेरे समतल श्रीनगर में लोगों के इस प्रकार औलाद फैल रही है जैसे कचालू के एक पौधे में दर्जनों फलियां उत्पन्न होती हैं किन्तु सूखे हुए वृक्ष में तो हे सधरेटा। कभी भी

कोंपलें नहीं फूट सकतीं। यानी तू इतना वृद्ध हो कर यह सोचना भी छोड़ दे कि तेरे कोई संतान उत्पन्न हो सकती है) ।

सधरेटा रोते गिड़गिड़ाते बोला कि यदि देवता ने उसकी मनोकामना पूरी न की तो वह मंदिर की सीढ़ियों के पत्थरों पर सिर पटक पटक कर प्राण न्योछावर कर देगा और अपनी आन्तों से पुल बना कर मुख्य द्वार पर झंडियों के स्थान पर टांग देगा। यदि उसके संतान न हुई तो उसे अपने अस्थिपंजर को घसीट कर गढ़वाल वापस ले जाने में भी कुछ लाभ नजर नहीं आता। उससे श्रेयस्कर है देवस्थान में आत्मबलिदान करना। महासू देवता राजा की प्रबल श्रद्धा से द्रवित हो गया और बोला कि उसकी सातों रानियों एवं पन्द्रह गायों के जो कि बंध्याएं थीं, सभी के संतानें होंगी। राजा ने अपनी रक्षा के लिए कौलू को साथ भेजने की प्रार्थना की, जिसकी देवता ने स्वीकृति दे दी।

सधरेटा ने महासू देवता के नाम पर कालका करनाल, भिम्भलिया ढोल और झालरा भाणा बंधेज के रूप में रखने का व्रत लिया और मनोरथ सिद्धि का वर ले कर कौलू को महासू का दूत बना कर अपनी राजधानी गढ़वाल श्रीनगर को रवाना हुआ। देवप्रताप से राजा के सातों रानियों के गर्भ से सात पुत्र उत्पन्न हुए—राय सिंह, हरि सिंह, फरिया, जगता आदि। इनमें राय सिंह ज्येष्ठ था।

कालांतर में जब राजा का निधन हुआ तो राय सिंह राज–सिंहासन पर बैठा। क्योंकि सभी भाई आपस में अत्यन्त प्रेम करते थे अतः राय सिंह ने अपने छहों भाइयों को अपनी मंत्री परिषद् में लिया और पुराने मंत्रियों को पदच्युत कर दिया। उन में रम्भू और दुर्गू नामक दो अत्यन्त षड़यंत्रकारी मंत्री भी थे।

राजा सधरेटा ने आपत्तिकाल में देवता महासू के नाम पर बंधेज रखने का जो व्रत लिया था, उसे तांबे की राजकीय बही में लिख लिया था किंतु पुत्र–रत्नों की प्राप्ति के पश्चात् बूढ़ा राजा खुशियों में इतना मस्त रहा कि उसे देवता को दिए वचन का किंचित मात्र भी ध्यान न रहा। रायसिंह ने भी कभी बही के पन्ने खोलने की ओर ध्यान न दिया। गढ़वाल के राजकुल को वचनच्युत होने के कारण महासू देवता का कोपभाजन बनना पड़ा रायसिंह को। रम्भू और दुर्गू अपने पदों की पुनः प्राप्ति के लिए प्रत्यन करने लगे। उन्हों ने रायसिंह के विरुद्ध जनता में चोरी छिपे प्रचार करना प्रारम्भ किया और साथ ही सधरेटा के छोटे भाई (कुंवर) तक राजदरबारियों को घूस दे कर यह चुगली पहुंचाई कि राय सिंह और उसके छहों भाई अपनी चाची (नई कुंवर रानी) के साथ तक दुराचार करने से नहीं चूकते। महासू की कोपदृष्टि के कारण रायसिंह के राजकाजीय प्रबन्ध में शिथिलता आ गई थी और रम्भू और दुर्गू के राज्य–व्यापी प्रचार के कारण जनता भी उनसे विमुख हो गई थी। कुंवर साहब की रानी के साथ व्यभिचार की बात से कुंवर साहब ने सातों भाइयों के विरुद्ध आरोपों की सुनवाई के लिए जनसभा का आयोजन करवाया। सातों राजकुमारों को भी सभा के समक्ष सफाई पेश करने के लिए बुलाया गया। रायसिंह को छोड़ कर छहों भाई सभा में उपस्थित हुए किन्तु कुल देवता की विमुखता के कारण अपने बचाव में प्रमाण प्रस्तुत न कर सके और जन–सभा ने उन्हें पदच्युत कर दिया और अन्त में मौत के घाट उतारा।

राय सिंह ने राज्याभिषेक के समय अपने कुल के चिन्ह के रूप में एक कटार बनवाई थी। उसके निर्माता लेलू नामक लोहार ने उसे आगाह कर दिया था कि उसकी मृत्यु उस कटार के अतिरिक्त किसी अन्य शस्त्र से नहीं हो सकती अतः उस से अनुरोध किया था कि जीवन भर उस कटार को सम्भाल कर सदैव अपने पास रखे। रम्भू और दुर्गू को किसी प्रकार यह भेद मालूम हो गया। राय सिंह की सफाई सुनने के लिए दुबारा जनता की सभा बुलाई गई जिसमें राय सिंह भी उपस्थित हुआ। सोने की मूठ वाली खानदानी कटार उसकी बगल में लटक रही थी। दरबारियों ने उसे देखने की इच्छा व्यक्त की तो वह इनकार न कर सका न ही उसे यह ज्ञान था कि इस कटार के वास्तविक रहस्य का किसी दरबारी को पता भी है। अन्त में एक दरबारी से दुर्गू ने वह कटार मांगी तो राजा राय सिंह सटपटाने लगा और कटार को वापस मांगने लगा। दुर्गू ने वापस देने के अंदाज में कटार राय सिंह की ओर फैंकी जो सीधी उसके वक्ष को चीर कर आर पार हो गई।

राय सिंह का काम तमाम कर रम्भू एवं दुर्गू उसके तीन वर्षीय राजकुमार को भी मार डालना चाहते थे किन्तु एक दयालन (मरासन) ने राजकुमार को अपने घाघरे में छुपा कर राय सिंह की रानी के साथ उसके मायके की राह ली। छोटा राजपुत्र अपने नानके में युवा हुआ और जब उसने होश सम्भाला तो अपने पूर्वजों के विषय में जिज्ञासा व्यक्त की किन्तु मां उसे छीने गए राज्य के बारे में बता कर पुरानी दुःखद यादों को ताजा नहीं करना चाहती थी। जब राजकुमार न माना तो उसे सारी कहानी कह सुनाई। राजकुमार छद्म वेष में अपनी राजधानी श्रीनगर के लिए रवाना हुआ। कुल का इतिहास जानने हेतु ताम्र-पत्रों की जांच-पड़ताल करने पर उसे ज्ञात हुआ कि राजा सिधराटा ने महासू देवता का बंधेज रखा था किन्तु उसे पूरा नहीं किया गया। कुल के सर्वनाश का कारण उसकी समझ में आ गया और उसने निश्चय किया कि शीघ्रातिशीघ्र वह राजा द्वारा देवता महासू को दिए गए वचन को कार्यान्वित करेगा। उसने कालका करनाल, भिभलिया ढोल एवं झालरा भाणा तीनों वस्तुएं तैयार करवा कर कुल पुरोहित की शरण ली जिसने उसे बताया कि इन्हें कुल देवता को अर्पित करने के लिए व अपने पिता व दादा की भूल का प्रायश्चित करने के लिए विशाल यज्ञ करना पड़ेगा।

देवता महासू के निर्देश के अनुसार राजकुमार ने नवजात बछड़ों को सोने के हल में जोत कर महेन्द्रथ नामक स्थान पर सीधे मैदान में भोर की बेला में हल चला कर यज्ञ से पूर्व महासू देवता का आह्वान किया। मंत्रोच्चारण के मध्य बछड़े बड़े बैलों में परिवर्तित हो गए और हल चलाने पर चारों भाई महासू की मूर्तियां भूगर्भ से उत्पन्न हुईं और कौलू सहित बाईस वीर भी भूगर्भ से बाहर निकले। महेन्द्रथ में एक भयानक राक्षस रहता था। जब महासू देवता को स्नान के लिए तौंस में ले जाया जा रहा था तो राक्षस ने व्यवधान उपस्थित किया किन्तु कौलू ने तत्काल उसका वध कर डाला। बाईस वीरों ने राक्षसों के रक्त की नदियां बहा दीं और तौंस नदी खून से लाल हो गई। देवता महासू को इस खून खराबे पर बड़ा क्षोभ हुआ और उसने महेन्द्रथ को छोड़ कर हनोल को अपना तीर्थ स्थान बनाने की इच्छा व्यक्त की। कौलू की गोद

म महासू को महेंद्रथ से हनोल ले जाया गया जहां यज्ञ द्वारा शुद्धि कर उसकी मन्दिर में विधिवत स्थापना की गई ।

बोठा महासू का मन्दिर हनोल में बनाया गया और वही सभी महासू भाइयों का पवित्र तीर्थ माना गया । बाशिक व पबासी महासू की पूजा के क्षेत्र निर्धारित किए गए। कोठीगाड़, पिंगल आदि आदि तथा चालदा महासू को सारे क्षेत्र में भ्रमण करने का कार्य सौंपा गया जिसके अन्तर्गत उसकी पालकी सारे नेपाल, गढ़वाल, बावर एवं हिमाचल के पूर्वी हिस्सों में भ्रमण करती है और जो भेंट चढ़ाई जाती है उसे बोठा महासू के पास हनोल पहुंचाती है । भिभलियां ढोल, कालका करनाल एवं झालरा, भाणा आज भी महासू देवता के पास पवित्र चिह्नों के रूप में रखे हैं । इस प्रकार राजा सिवराटा के राजवंश को श्रीनगर की राजगद्दी महासू की कृपा से वापिस मिल गई।

—जी, 4, रूपांकुश, शिमला-1

ललाहु में विवाह-प्रथा

—बलराम

हिमाचल प्रदेश के 12 जिलों में से सीमान्त जिला लाहुल-स्पिति अपना ही महत्व रखता है। बर्फीली पहाड़ियां तथा यहां पर रहने वाले भोले-भाले जनजातीय लोग कठिन परिश्रम करके अपना जीवन यापन करते हैं। प्रकृति की गोद में बसने वाले ये लोग अपनी परम्पराओं तथा रीति-रिवाजों को कभी नहीं भूलते। जीवन की कठिनाइयों का सामना करते हुए ये लोग उत्सव मेले धूम धाम से मनाते हैं।

लाहुल के जनजातीय लोगों में विवाह प्रथा भी अपने ही ढंग की है। जैसा कि सभी जानते हैं कि दहेज प्रथा जैसी कुरीति जो हमारे समाज में प्रचलित है; के कारण लड़की के जन्म का अभिप्राय है माता-पिता के लिए एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी। लड़की को एक बोझ सा माना जाता है यद्यपि मां-बाप प्रत्यक्ष रूप से ऐसा न कहें परन्तु जब वे एक-दो स्थानों पर दहेज जैसी अड़चन के कारण अपनी कन्या का रिश्ता निश्चित नहीं कर पाते तो वे इस मजबूरी को अवश्य अनुभव करते हैं। यह कुप्रथा समाज में लाखों नवयुवतियों के जीवन में बाधा बनकर आती है। माता-पिता के रहते वे सुखी जीवन यापन कर सकती हैं परन्तु बाद में पेट की खातिर कई बार उन्हें घिनौने काम भी करने पड़ते हैं।

इस दिशा में जनजातीय लोग बाहरी दुनियां को एक राह दिखाते हैं। दहेज प्रथा लाहुल-स्पिति ज़िले में नहीं है। ये जनजातीय लोग दुल्हन का मूल्य मनुष्यता से आंकते हैं, न कि धन से।

लाहुल में तीन घाटियां हैं; पट्टन, गाहर, तथा तिनन। यहां पर विवाह के तीन रिवाज प्रचलित हैं!

1. मोड ब्याह।
2. क्वाची ब्याह।
3. कूज़ी ब्याह।

मोड विवाह तथा क्वाची ब्याह माता-पिता के प्रबन्ध से किए जाते हैं तथा दोनों पक्षों को काफ़ी धन व्यय करना पड़ता है। विवाह निश्चित करते समय होने वाली वधू के गुण ही एक मात्र विवाह का आधार माने जाते हैं। अमीरी-गरीबी का प्रश्न बीच में नहीं आता है। इस प्रकार एक मजदूर की बेटी एक अमीर घराने की बहू बन सकती है। इस बात में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि विवाह सम्बन्धों के लिए पारिवारिक परिस्थितियों का कोई सम्बन्ध रहा नहीं होता।

अब प्रश्न उठता है कि विवाह किस प्रकार निश्चित किए जाते हैं । सर्वप्रथम कन्या के मां-बाप के घर वर के मामा या कोई निकटतम सम्बन्धी, विवाह प्रस्ताव लेकर जाते हैं । विवाह प्रस्ताव को स्थानीय भाषा में ब्याह-रूकसी कहते हैं प्रायः बुद्धिमान तथा योग्य व्यक्ति को संदेशवाहक के रूप में भेजा जाता है । प्रथम परिचय में लड़की के मां-बाप सन्देशवाहक को कुछ दिनों के बाद आने के लिए कहते हैं ताकि वे सोच विचार कर निर्णय ले सकें । इस प्रकार यह सन्देशवाहक जिसे धामू कहा जाता है एक मध्यस्थ का काम करता है। दस-पन्द्रह दिनों के बाद वह फिर जाता है । इस प्रकार अन्तिम निर्णय का पता लगाया जाता है । यदि लड़की के माता-पिता का उत्तर नहीं में होता है तो वह अन्तिम रूप से नकारात्मक ही माना जाता है । तथापि सन्देशवाहक (धामू) का यह प्रयास रहता है कि उत्तर 'हां' में ही लिया जाए। वास्तव में यह समय बहुत नाजुक होता है । सन्देशवाहक लड़की के घर में प्रवेश करते ही स्थिति का अनुमान लगा लेता है । यदि उसका बहुत स्वागत किया जाए तो वह उनकी स्वीकृति को भांप लेता है ।

रिश्ता स्वीकार किए जाने की स्थिति में एक छोटी सी रस्म निभाई जाती है । लड़की के माता-पिता कुछ स्थानीय मदिरा प्रस्तुत करते हैं तथा लड़के की ओर से सन्देशवाहक उतनी ही मात्रा में मदिरा भेंट करता है । इस अवसर पर लड़की के एक-दो निकटतम सम्बन्धी भी आमन्त्रित किए जाते हैं ताकि उन्हें भी सूचना मिल जाए।

इस प्रकार संदेशवाहक (धामू) लड़के के घर समाचार बताने आता है । वहां उसका बहुत स्वागत होता है क्योंकि वह अपने उद्देश्य में सफल रहा है।

विवाह का दिन निश्चित करने के लिए कुछ समय के पश्चात् दोनों पक्ष मिलते हैं। विवाह का दिन निश्चित करते समय यह विशेष ध्यान रखा जाता है कि दोनों पक्षों की सुविधा हो ।

विवाह के लिए आमन्त्रित करने हेतु निमन्त्रण पत्र भेजने की प्रथा यहां नहीं है इसका तात्पर्य यह नहीं कि यहां के लोग इससे अनभिज्ञ हैं । निमन्त्रण देने के लिए कुछ लोगों को नियुक्त किया जाता है । इस प्रकार दूरी चाहे एक मील की हो या तीस मील की उसे जाना ही पड़ता है। विवाह पक्ष वालों को इस बात की चिन्ता नहीं होती चाहे वे किसी भी प्रकार जाएं । यह उनका अपना दायित्व बन जाता है। न ही उन्हें किसी प्रकार का पारिश्रमिक इस कार्य के लिए दिया जाता है । यहां पाठक इस बात को जानना चाहेंगे कि इस कार्य को करने की स्वीकृति देने की क्या आवश्यकता है जबकि उन्हें यह भली भांति ज्ञात है कि यह कार्य कितना कठिन है । इतना समय वे अपने निजि काम में भी तो लगा सकते हैं । परन्तु इसका उत्तर कोई पेचीदा नहीं है । एक दिन उन्हें भी तो विवाह का आयोजन करना है तब उन्हें भी निमन्त्रण देने के लिये किसी की सेवाओं की आवश्यकता होगी । क्योंकि स्वयं तो हरेक घर में जाना सम्भव नहीं होगा । आपसी सहयोग का यह एक उत्तम उदाहरण है ।

इसके पश्चात् एक दिन लोग एकत्रित होते हैं । विवाह में सम्बन्धी तथा मित्रों के अतिरिक्त सारे गांव वालों को बुलाया जाता है । रात्रि के समय दूल्हा अग्नि के समक्ष सब लोगों का आशीष लेता है तथा अग्नि की परिक्रमा लेता है । साज बाज उस समय बजते ही हैं । दूसरे दिन दोपहर को बारात वधू के घर की ओर प्रस्थान करती है बारात को स्थानीय भाषा में बिम्रऊ ग्रहाकरे कहा जाता है । वर (ब्याहु) घोड़ी पर तथा वधू (ब्यहुलिरी) के पालकी में जाने की यह प्रथा यहां पर नहीं है । एक रात वधू के घर में ठहरने के पश्चात बारात वधू को लेकर दूसरे दिन लौट आती है । इस प्रकार लड़की अपने मां-बाप, बहन-भाई तथा बचपन की सहेलियों से विदा लेती है तथा गांव का कण कण जो कि उसका जाना पहचाना होता है, इन सब से विदा लेते हुए वह सिसक-सिसक कर रोती है । विदाई के समय वह अपने पिता के पांव छूती है, मां के गले लगती है और भाई से मूक अनुरोध करती है कि "भैया विवाह कर लो ताकि भाभी के आने से बहन का अभाव उन्हें अनुभव न हो।" वातावरण उदासीनता से भर जाता है । प्रत्येक की आंखें आंसुओं से भर जाती हैं । यहां तक कि कई बार मैंने दूल्हा को भी रुमाल से आंखें पोंछते देखा है । आखिर वह भी तो इन्सान है चाहे वह कितना प्रसन्न क्यों न हो कि वह अपनी दुल्हन को साथ लेकर जा रहा है; फिर वह कैसे अपनी दुल्हन को रोते देख सकता है । यह दृश्य और भी करुण बन जाता है जब कि स्त्रियां यह गाना आरम्भ कर देती है "मत रोए धीए भले जोगू ब्याहे ...." बेटी रो मत तेरा सम्बन्ध अच्छे घराने से हुआ है । परन्तु ये बोल सान्त्वना के स्थान पर उसकी सिसकियों को और भी तेज़ कर देते हैं । उसे स्मरण हो आता है कि अब वह सबसे जुदा हो रही है ।

बारात आगे बढ़ती है । लड़की की सखियां आगे आती हैं और बारात का रास्ता रोकती हैं । यह भी इसी बात को दर्शाती हैं कि यह उनकी अन्तिम मुलाकात है। विवाह के बाद वे सब गांव के पनघट पर इकट्ठी शायद ही मिल सकें । दुल्हन की सखियां रास्ता तब छोड़ती हैं जब दूल्हा उन्हें विश्वास दिला दे कि वह उनकी सहेली की अच्छी तरह देख भाल करेगा । इस प्रकार उन्हें वह सौ रुपये या उससे अधिक राशि देकर विश्वास दिलाता है । तभी बारात आगे जा सकती है । कई बार दूल्हा शर्म के मारे आगे न आए तो उसका प्रतिनिधित्व कोई बड़ा व्यक्ति करता है। बारात को आगे जाने की आज्ञा तभी मिलती है जबकि लड़की की सहेलियों को पैसे मिल जाते हैं, गांव के लोग कन्या के प्रति अपना स्नेह सब बारातियों को चाकटी, चाय और अन्य खाने-पीने की वस्तुएं देकर दर्शाते हैं ।

तत्पश्चात् वधू अपने गांव को अलविदा कहती है ।

जैसे ही बारात दूल्हे के गांव में प्रवेश करती है तो एक समूह जिसका नेतृत्व पंडित करता है, बारात का स्वागत करता है और घर के द्वार पर एक और जनसमूह इनका स्वागत करता है जिसकी मुखिया लड़के की मां होती है ।

महिलाएं अपनी पारम्परिक वेशभूषा में सुसज्जित होती हैं । फिर सारी रात खाने पीने तथा नाचने के दौर चलते हैं । प्रत्येक उपस्थित मनुष्य को खाना खिलाया जाता

है । खाने का समय रात्रि नौ बजे से प्रारम्भ होकर रात के एक बजे तक चलता है । बहुत अतिथि होने के कारण सबको एक साथ खाना परोसना कठिन होता है। दूसरी सुबह मदिरा के दौर फिर आरम्भ होते हैं नाश्ते में मास्चू, चाकटी और रोटी इत्यादि दी जाती है और दोपहर के भोजन तक यह सब जारी रहता है। इसके पश्चात दुल्हन के सम्बन्धी अपने घर वापिस जाने लगते हैं। जाने से पहले वे दुल्हन को कुछ पैसे देते हैं । इस बार दुल्हन को अपने लोगों की जुदाई का आभास एक बार फिर होता है, उसे नए लोगों के मध्य रहना होता है जिन्हें वह जानती भी नहीं है।

इस प्रकार वर के गांव के लोग चाकटी का स्वाद उस दिन भी लेते हैं । उसी रात को एक और रस्म होती है जिसे "ब्याहु लुआड़" कहते हैं । कुल पुरोहित (जिसे 'भाट' कहा जाता है) हवन करता है और मन्त्रों का जाप करता है। वह नवविवाहित युगल के सुखी जीवन की आकांक्षा करता है । पुरोहित अनपढ़ होता है इसलिए मन्त्रों का उच्चारण वह किसी पुस्तक से नहीं करता अपितु उसने अपने पिता से मन्त्र सीखे होते हैं । वह यह जानता है कि कौन सा मन्त्र किस अवसर पर बोलना है ।

दो-तीन दिनों के पश्चात् नव-विवाहित दम्पत्ति वर के पिता तथा एक बड़ी महिला के साथ वधू के घर उनका आशीर्वाद लेने के लिए जाते हैं । वे उन्हें निमन्त्रित करते हैं और उनका निमन्त्रण स्वीकार भी किया जाता है । दूल्हा दुल्हन को उनके संबन्धी अपने घर खाना खाने के लिए बुलाते हैं । दूल्हा दुल्हन की शादी के बाद मेहमानबाजी को 'फेरोणी' कहते हैं । इस प्रकार यह कार्यक्रम सात आठ दिन चलता है ।

अब जहां तक कि "क्वाची विवाह" का सम्बन्ध है यह उतना विस्तृत नहीं जितना कि "मोड व्याह" है । केवल तीन चार लोग दुल्हन को लाने के लिए जाते हैं । यहां तक कि दूल्हा भी नहीं जाता । दूल्हे का प्रतिनिधित्व प्रायः उसकी छोटी बहन करती है । वे शाम को देर से जाते हैं और सुबह जल्दी ही लौट आते हैं । इस प्रकार यह विवाह एक दो दिनों तक ही रहता है ।

इस प्रकार के विवाह में खर्च भी बहुत कम होता है। परन्तु समाज में दिखावे के लिए क्वाची विवाह लोक-प्रिय नहीं है । गरीब से गरीब लोग भी इससे परे हट रहे हैं । दोनों पक्षों में यदि एक भी पक्ष क्वाची विवाह के हक में न हो तो "मोड ब्याह" ही होता है ।

तीसरी प्रकार का विवाह अर्थात "कूजी ब्याह" अब बिल्कुल समाप्त ही हो गया है। इसमें वर अपने मित्रों सहित लड़की का अपहरण कर लेते थे । कई बार यह लड़की की इच्छा से होता था और कई बार लड़की के बिना पूछे ही। यदि यह लड़की की पूर्व स्वीकृति से होता था तो कोई कठिनाई नहीं आती थी यदि लड़की की स्वीकृति न हो तो दोनों परिवारों में दुश्मनी पैदा हो जाती थी । इस कारण से इस प्रथा का अन्त ही हो गया है । यदि पति पत्नी में सम्बन्ध विच्छेद करना हो तो दम्पत्ति ऊन के पतले धागे को खींच कर तोड़ लेते हैं । इसे 'छुद्थ्याकिच' कहते हैं।

यहां यह कहना असंगत न होगा कि लाहुल में शादी निश्चित करने के लिए जन्म-पत्री का कोई स्थान नहीं है। किसी की जन्म-पत्री नहीं मिलाई जाती। इस प्रकार विवाह निश्चित करने के लिये जन्म-पत्री रास्ते मे रोड़ा नहीं बनती। यह इसलिए भी है कि लाहुल-स्पिति में जन्मपत्री बनाने की प्रथा ही नहीं है।

लाहुल-स्पिति में विवाहोत्सव में "भाट" (पुरोहित) की भूमिका विशेष महत्वपूर्ण नहीं है। भाट की सेवाओं को केवल दो बार ही लिया जाता है। एक बार तब जब बारात (बिग्रऊ ग्रहाकरे) का स्वागत किया जाता है दूसरी बार "बिग्रऊ टाड़ा" के समय। बस। मगर इस दौरान भी 'भाट' का ही होना अत्यावश्यक नहीं है। क्योंकि किसी भी देवी या देवता का "गुरहं" (चेला) इसे भली भांति निभा लेता है।

हिन्दु तथा बौद्धों के विवाह में कोई विशेष भिन्नता नहीं है। विवाह के रस्म रिवाज एक से ही हैं। विशेष अन्तर यह है कि बौद्ध धर्म के अनुयायियों की बारात (बिग्रउ ग्रहाकरे) सुबह जाती है और शाम को दुल्हन लेकर वापिस आ जाती है। परन्तु हिन्दु धर्म अनुयायियों की बारात दूसरे दिन वापिस आती है।

बारात का स्वागत दोनों ओर 'भाट' तथा गुर मन्त्रोच्चारण के साथ जीवित मेमने को छत से फैंक कर करता है। बाराती मेमने को नीचे गिरने ही नहीं देते, बीच में ही पकड़ कर चाकू से मेमने का पेट फाड़ कर कलेजा निकाल लेते हैं और कच्चा ही खा जाते हैं। उस समय जो लोग इस अमानवीय काम में भाग लेते हैं वे चलते फिरते राक्षस ही लगते हैं। वैसे भी इस बात में कोई सन्देह नहीं कि शराब के नशे में धुत वह अर्धमानव जैसे ही होते हैं। यह प्रसन्नता का विषय है कि बारात का इस प्रकार का स्वागत करने का रिवाज़ अब धीरे धीरे समाप्त ही हो रहा है।

कुछ लेखक अनभिज्ञता के कारण यह लिखते हैं कि लाहुल में विवाह के दिन रविवार और सोमवार ही होते हैं। (Dr. S. S. Shashi Himachal, Nature's Peaceful Paradise, P.127) परन्तु यह कोई आवश्यक नहीं कि विवाह सप्ताह के इन्हीं दिनों में ही सम्पन्न हों। न ही कोई पंडित विवाह की तिथि निश्चित करता है। बल्कि यह दोनों पक्षों की सुविधानुसार होता है।

दूल्हे की बारात में न तो दूल्हे के माता-पिता जाते हैं और न ही उसके भाई बहिन। हां बारात की वापसी के समय दुल्हन के भाई-बहिन साथ आते हैं।

विवाह के दो तीन दिन बाद दूल्हा-दुल्हन को मेहमानवाज़ी के लिए बुलाया जाता है जिसे स्थानीय भाषा में "फेरोणी" कहा जाता है।

हर जाति वाले लोग अपनी ही बिरादरी में विवाह-सम्बन्ध चाहते हैं। परन्तु शिक्षा के प्रसार के कारण यह धारणा अब समाप्त हो रही है। नज़दीकी रिश्तेदारों के बीच शादी का रिश्ता नहीं किया जाता। बहुपतित्व की प्रथा भी लगभग समाप्त ही हो गई है। सिविल मैरिज लगभग नहीं के बराबर ही होती है।

—सहायक निदेशक,
श्रम ब्यूरो, शिमला-4।

बिलासपुरी लोकगीत मोहणा—एक अध्ययन

—सीता राम खजूरिया

हिमाचल प्रदेश के लोक साहित्य में 'मोहणो' 'लोकगीत का अपना विशिष्ट स्थान है। सच्ची घटना पर आधारित इस लोक गीत का सम्बन्ध मोहण नामक व्यक्ति से है जो बिलासपुर जिला में घुमारवीं तहसील के पन्याला नामक गांव में रहा करता था। कहा जाता है कि मोहण एक हृष्ट-पुष्ट अच्छी सेहत वाला परन्तु मन का भोला-भाला व्यक्ति था। मोहण का बड़ा भाई तुलसी रियासत के राजा के यहां 'हाज़री' था। (हाज़री' वर्तमान Attendant का रूप था)।

भाग्य का चक्कर कुछ ऐसा चला कि एक बार जब तुलसी छुट्टी लेकर घर आया हुआ था तो गांव में भूमि के एक झगड़े में तुलसु ने मसद्दी नामक व्यक्ति की हत्या कर दी। हत्या की खबर जंगल की आग की तरह फैल गई। हत्या के आरोप में तुलसु, मोहण तथा इनके तीसरे भाई दया राम को हिरासत मे ले लिया गया परन्तु इसी बीच हत्यारे भाई तुलसु ने अपने सीधे-साधे भाई मोहण को इस बात पर राजी कर दिया कि हत्या का आरोप वह अपने ऊपर ले ले। बात सिरे चढ़ गई। मोहण ने हत्या का अपराध स्वीकार कर लिया।

इसके पीछे एक कारण यह भी बताया जाता है कि मोहण को उसके भाई ने यह आश्वासन दिलाया था कि वह राजा का 'हाजरी' होने के कारण मोहन की कड़ी से कड़ी सजा माफ करवा लेगा। मुकद्दमा चला, हत्या के अपराध के लिए मोहण को फांसी की सजा दी गई। और बेचारे मोहण को फांसी के तख्ते पर उस अपराध के कारण झूलना पड़ा जिसका उत्तरदायित्व वास्तव में उसके भाई तुलसु पर था, तभी तो लोक कवि कहता है:

कन्धे परना ओ मोहणा कन्धे परना।
भाईयें रिया गलाईया तिजो पया मरना॥

मोहणा एक दुखांत लोक गीत है। पंजाबी की हीर की तरह मोहणा का गायन भी एक विशेष ढंग से होता है जो इतना दर्दीला है कि सुनने वाले के हृदय की अन्ततंम तहों को झंझोड़ देता है। साहित्य में जो स्थान रोमियो-जुलियट, हीर-रांझा व लैला-मजनू का है वही स्थान पहाड़ी लोक साहित्य में मोहणा लोक गीत का माना जा सकता है।

सच्ची घटना पर आधारित इस लोक गीत का मानवीय पहलू इतना मार्मिक है कि गीत सुनने वाले व्यक्ति का हृदय पसीज उठता है। उसमें एक ऐसे व्यक्ति का चित्र आंखों के सामने आता है जो भ्रातृ-भाव से ओत-प्रोत है, जो अपने भाई के लिए बड़े से बड़ा बलिदान बिना किसी झिझक के, बिना किसी तर्क के सहज ही में दे सकता है। भाई के जरा से कहने पर मोहण ने अपना जीवन बलिदान दे दिया। इस लोक गीत के पीछे एक भाई का दूसरे भाई के लिए कभी न हिलने वाला विश्वास भी है। भाई का इशारा मोहण के लिए पत्थर की लकीर था जिसे मानो गीता का उपदेश जान कर उस हत्या का उत्तरदायित्व उसने अपने ऊपर ले लिया जिसके लिए न वह जिम्मेवार था और न ही जिसमें उसका कोई हाथ था। बिलासपुर रियासत के राजा का कोई कानून, समाज की कोई शक्ति मोहण को उसके अटल विश्वास, भाई को बचाने की बात से टस से मस न कर सकी। सही अर्थों में मोहण एक उच्च नैतिकता वाला व्यक्ति था जिसने दूसरों के दोष का बोझ हंसते-हंसते अपने सर बांध लिया जब कि कहा जाता है कि बिलासपुर रियासत का तत्कालीन राजा विजय चन्द व दूसरे दरबार के लोग सच्चाई समझ रहे थे और मोहण के निर्दोष होने की बात भी जान रहे थे।

यहां तक कहा जाता है कि मोहण के निर्दोष होने की बात समझते हुये राजा विजय चन्द ने मोहण को बार बार समझाया कि वह दूसरों का अपराध अपने सिर न ले और ऐसा करने पर मोहण को फांसी के तख्ते पर चढ़ना पड़ेगा जिससे फिर न उसे उसका भाई बचा पाएगा, न कोई और। परन्तु इन सब बातों का मोहण पर कोई असर नहीं हुआ और न्यायालय में हर बार पूछे जाने पर हत्या का आरोप मोहण ने जोर देकर स्वीकार किया।

अन्त में धार्मिक व न्याय-प्रिय राजा विजय चन्द भी मानवता और न्याय की खींचातानी में हार गया। कानून 'कानून' है। भावुकता उसकी परिधि से बाहर की चीज है। मुकद्दमे के फैसले का दिन आया। सांडू के मैदान में (जो अब गोविन्द सागर में समा गया है) राजा विजय चन्द की कचहरी लगी। कहते हैं कि राजा विजय चन्द ने काले कपड़े पहन कर काली कलम से मोहण को फांसी का हुकम लिखा। फैसला सुनाने के बाद राजा ने काले कपड़े उतार फैंके तथा कुर्सी, मेज व कलम भी तोड़ डाले जिनसे यह भयानक फैसला लिखने में काम लिया गया था। फांसी का समय 12 बजे का रखा गया जब घड़ी की सुइयां अपना चक्कर पूरा कर लेती हैं। यह इस बात का भी संकेत था कि मोहण का जीवन चक्कर भी पूरा हो गया। मोहण को पुराने बिलासपुर नगर के एक कोने बेड़ीघाट में फांसी दी गई थी। फांसी दिए जाने वाले दिन दूर-दूर से लोग वहां इकट्ठे हुए थे। कहते हैं कि मोहण अभी फांसी के तख्ते पर चढ़ा भी नहीं था कि कुछ ग्रामीण लोक-कवियों ने मोहणा का संवेदना भरा गीत गाना आरम्भ कर दिया था और उसी दिन से यह लोकगीत लोक गायक की सम्पत्ति बन गई। फांसी के दृष्य को लोक गायक ने इस प्रकार दर्शाया है :—

खम्बे गडुरे, ओ मोहणा खम्बे खडुरे,
बेड़िया रे घाटे मुया खम्बे खडुरे।

लोक गीत में जिन खम्बों की ओर इशारा किया गया है वह खम्बे वही हैं जो मोहण को फांसी देने के लिए बेड़ीघाट में गाड़े गये थे। मोहण के जीवन-चक्र को पूरा होना लोक गीत में सांकेतिक ढंग से दर्शाया जाता है जो एक वास्तविकता भी थी,

बारह बजीगे, मोहणा बारह बजीगे,
राजे रिया घड़िया बारह बजीगे--

कुछ गायक गीत के इस स्थान पर "राजे रिया" के स्थान पर "तेरी जेबा रिया" भी कहते हैं जो एक विसंगति सी लगती है। क्योंकि 'मोहणा' के समय की सामाजिक स्थिति की ओर दृष्टिपात करें तो ऐसा समझना कठिन है कि मोहण जैसा सीधे साधे कृषक की जेब में घड़ी होगी। जबकि घड़ी का चलन उस समय कम ही था और यह एक Luxury वाली वस्तु समझी जाती थी और राजा या दूसरे महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों के पास इसका होना स्वाभाविक था। अतः यह समझना ही स्वाभाविक है कि घड़ी राजा के पास ही होगी अतः "राजे रिया घड़िया, बारह बजीगे" ही उपयुक्त एवं स्वाभाविक प्रतीत होता है।

भाई के लिए बलिदान देकर सीधे साधे, ग्रामीण युवक मोहण ने लोगों का दिल जीत लिया। लोक-कवि का ध्यान उसकी ओर खिचना स्वाभाविक था। लोक-कवि या लोक-गायक के दिल में मोहण को जो स्थान प्राप्त है वह प्रदेश के बहुत ही कम लोकगीतों को प्राप्त है। मोहण से लोक गायक का स्नेह इतना अटूट और हृदय स्पर्शी है कि देखते ही बनता है--जब लोक-गायक यों गाता है :

तू नी दिसदा ओ मोहणा तू नी दिसदा,
बामणा रा छोरू मोहणा तू नी दिसदा,
मेरा पला पला खूना रा रोज सुकदा !

गीत के एक टप्पे में मोहणा की जुदाई यों दिखाई गई है।

तेरी बुरियें ओ मोहणा तेरी बुरिये
मेरा गला लाया लेसणे पंनी छुरीये !

मोहणा के स्वभाव का गीत के इन बोलों में पता चलता है :

फुल्ल फुल्लणे, ओ मोहणा, फुल्ल फुल्लणे,
तेरे मिठड़े सुभाव मुया कियां भुलणे।

इस प्रकार इस लोक गीत में मोहण द्वारा अपने भाई के लिए बलिदान, मोहण का मीठा स्वभाव, उसको फांसी दिये जाने का दृष्य तथा लोक गायक का मोहण के लिए स्वाभाविक प्रेम आदि बड़े ही बढ़िया ढंग से दर्शाये गये हैं जो पहाड़ी लोक-साहित्य की एक उच्च स्तर की त्राजिदी कही जा सकती है।

--वीर हिमाचल प्रैस, दी माल शिमला।

ठेठ पहाड़ी के ठाठ

--प्रो0 हरि राम जसटा

शैक्स्पीयर के प्रसिद्ध नाटक हैमलेट में एक स्थान पर दो पात्रों में यह बात चीत होती है :—

पोलोनियस : श्रीमान जी, आप क्या पढ़ रहे हैं ?

हैमलेट : शब्द, शब्द, शब्द ।

भाषा मानव व्यक्तित्व की शब्दों में अभिव्यक्ति है । भाषा पर इन दो परस्पर विरोधी दृष्टिकोणों में भी विचार कर सकते हैं । शब्द-कोष के रचयिता के लिये शब्द का रूप, अर्थ और कार्य निश्चित है। उनको जोड़ने वाला सिद्धान्त सामान्य व्युत्पत्ति है। प्रत्येक शब्द को एक जैसे आदर की अपेक्षा है, वह सामान्य है या अलभ्य, नया या पुराना, उपयोगी है या अनुपयोगी–कोशकार का मूलभूत गुण है निष्पक्षता और सम्पूर्णता। और हम उससे वैसी व्यक्तिगत रुचि और भावना प्रदर्शित करने की आशा नहीं रखते, जैसी कई बार अंग्रेजी के प्रसिद्ध कोशकार डा0 जोन्सन दिखाते थे। एक ओर तो शब्द कोष निर्जीव और अलग शब्दों का सम्पूर्ण विवरण है।

दूसरी ओर एक कल्पनाशील लेखक के लिए और विशेषकर कवि के लिए शब्द आत्म-अभिव्यक्ति का माध्यम है। किसी सीमा तक कठोर शब्दों का परिचालन इस ढंग से किया जा सकता है जिससे वे किसी विशेष व्यक्ति के मन की छाप डालने में सक्षम होते हैं । कवि के लिए शब्द अन्य लोगों की कल्पना का कार्य और अपने कार्य की सामग्री का काम देते हैं। "कवि", शैली (Shelley) के अनुसार "भाषा के रचयिता होते हैं"। भाषा का इतिहास इस महान दावे को आंशिक रूप से समर्थन करता है । पाठकों और कवियों के लिए शब्द किसी सन्दर्भ में ही सामने आते हैं, अलग रहने से वे ओझल या लुप्त हो जाते हैं । साहित्यकार के लिए शब्द न ही अन्तिमता है और न ही पूर्णता । बेनेडेटो क्रोसे के शब्दों में पूर्ण भाषा की खोज वैसे ही है, जैसे गति की निश्चलता की खोज ।

लेकिन इन दोनों दृष्टिकोणों में परस्पर कड़ा विरोध नहीं है । इनमें समझौता संभव है और इसी समझौते के बलबूते पर, भाषा के अध्ययन को ऊपर-विज्ञान के धरातल से उठाकर समालोचना और इतिहास के क्षेत्र तक लाया जा सकता है । प्रसिद्ध लेखकों की लेखनपद्धति शब्दों के ठीक प्रयोग की उच्च प्रमाण मानी जाती रही है । डा0 जानसन का अंग्रेजी भाषा का शब्द-कोष अंग्रेजी साहित्य के विस्तृत अध्ययन पर आधारित

है और यही प्रणाली अंग्रेजी के आक्सफोर्ड शब्दकोष के निर्माण के समय अपनाई गई । प्रत्येक भाषा के सर्वश्रेष्ठ लेखक ही उस भाषा के गैरसरकारी संरक्षक एवं परिषद (अकादमी) होते हैं । फिर भी साहित्यिक भाषा का प्रसारण एवं पथ-प्रदर्शन परम्परा एवं मिसाल द्वारा होता रहा है । इसलिए किसी भी भाषा का उसके साहित्य से विच्छेद नहीं किया जा सकता । दोनों एक दूसरे के पूरक हैं ।

साहित्यिक भाषा और बोलचाल की लोकभाषा में अन्तर होता ही है । लोकभाषा के लोक-प्रचलित शब्द, यह आवश्यक नहीं, उस भाषा के श्रेष्ठ-लेखक अपनायें और न ही उनका निर्माण यदा कदा उन द्वारा होता है । कवि लोग हमारी भाषा के कई सुन्दर शब्दों का निर्माण करते हैं ।

बोलचाल की पहाड़ी भाषा का वास्तविक इतिहास निश्चित रूप से इसके साहित्यिक इतिहास से बहुत पुराना है । पहाड़ी के साहित्यिक आदर्श, मूल्य, मिसालें, परम्परायें अभी बनने को हैं । इसलिए दैनिक बोलचाल की पहाड़ी लोक-भाषा के एक रूप महासुई के दैनिक शब्द–समूह के कुछ ठेठ पहाड़ी शब्द और उनके अर्थ का ज़िक्र यहां करूंगा ।

शब्द और अर्थ का अभिन्न सम्बन्ध प्रायः भाषा-शास्त्रियों ने स्वीकार किया है । इस सम्बन्ध का बड़ा प्रमाण यह है कि शब्द के बिना कोई अर्थ और अर्थ के बिना कोई शब्द नहीं । जिस शब्द की कोई शक्ति नहीं वह शब्द नहीं कहा जाता । ध्वनि सार्थक होकर ही शब्द कहलाती है । जिस ध्वनि का कोई अर्थ नहीं होता, वह अस्थायी और क्षणिक होती है । उसका कोई ग्राहक नहीं होता । शब्द और अर्थ के इस सम्बन्ध को आकस्मिक अनित्य और कृत्रिम (मनुष्यकृत) माना गया है । तभी तो भाषा भेद अधिक हैं और एक ही भाषा में किसी शब्द का कोई अर्थ स्थिर नहीं रह पाता । उदाहरणतः बार, बस का अर्थ हिन्दी, अंग्रेजी और पहाड़ी में भिन्न भिन्न हैं :—.

बार : (हिन्दी) द्वार, दरबार, स्थान, आश्रय, काल, समय, घेरा इत्यादि । (अंग्रेजी) दण्ड, छड़, सिल, रोक, अर्गल, रेखा, वकालत, अदालत, मधुशाला, इत्यादि, (पहाड़ी) लोकगाथा, समय, दिन, लोकगीत, फिर ।

बस : (हिन्दी) वश, इच्छा, प्रभाव इत्यादि ।
(पहाड़ी) बन्द करना, गाड़ी, वश, रोक ।
(अंग्रेजी) गाड़ी ।

यह बात भी विचारणीय है, एक वस्तु, विचार अथवा व्यापार के लिये पहाड़ी में भिन्न भिन्न शब्द मिलते हैं, जैसे घींडो, खरोलो, रालो, घोटो । सभी भाषाओं के लिए यह सत्य है कि समाज चाहे बड़ा हो या छोटा, भाषा चाहे साहित्यिक हो या बोलचाल की, लेकिन जिस शब्द के लिये जो अर्थ स्वीकार करता है, वही सर्वमान्य होता है । वैज्ञानिक शब्द इसमें नहीं आते—पहाड़ी भाषा के परम्परागत तथा निजी गढ़न के ऐसे अनेक शब्द हैं, जिन्हें हम रूढ़ार्थ कहते हैं । प्रायः इनका सम्बन्ध अर्थ के साथ सीधे नहीं दिखाई देता पर उनका भी मूल विश्लेषण और वैज्ञानिक अध्ययन करने की आवश्यकता है । जैसे खूंद, पाठा, पाशा, बौंइर, डीम, गाडर, चौंरा, सिड़कू, बाड़ी, पटांडे,

दैपन, खीग, माखता, खुमली, मेल, मुग्राणा, मौडकी, गीड़, इत्यादि। ऋग्वेद (1/164/29) का वचन है कि ऋचाएं परम-अविनाशी शब्द मय अक्षर पर ठहरी हैं जो अर्थ का मूल है। इसलिये ऋचा के अर्थ समझने के लिए अक्षरार्थ का जानना आवश्यक है। पतंजलि तो यहां तक मानते हैं कि सभी वर्ण अर्थवान होते हैं। एकाक्षरी कोशों और तंत्र बीज मन्त्रों से ज्ञात होता है कि प्रत्येक ध्वनि में अर्थ निहित रहता है, लेकिन उसकी अर्थशक्ति दूसरी ध्वनियों के मेल में प्रगट होती है। जैसे प्रत्येक शब्द का अर्थ तो होता है पर वाक्य और प्रसंग में प्रयुक्त होकर ही उसकी अर्थ-संगति निश्चित होती है। जैसे:—

(1) तार (टेलीग्राम)–मूं शिमलै दौ तार मिलो।
—बिजली री तार लागि गोई।
—बाशनी री तार देखो।
—नौई दौ पार तार।

(2) खेची—(खेती) आलू री खेची कोरी।
(निजिधन) तौसौ री खेची कुणै खाई?
(अकेलै)–तै होवर का तेरै खेची रौतो?

(3) खालटा (खाल) – एस खाडू रो खालटा गाड़ी।
(थैला)– नाजौ रा खालटा थौरटो खि नीओ।
(एक जैसा) तीनै दीतौ आपणों खालटा जींवदीयै।
(मुहावरा) –खालटै पांदै जेवटा (बड़ों के साथ छोटों का कल्याण)।

(4) झूरी– (नायिका) झूरि री आखटी चांदनी री लोई।
(लोक गीत शैली) झूरि रा एक चटाका शुणौ।
(पछताना) गांधी जीओ खि दुनिया झूरि।
(रेखा) तैसरै मुहों दि एक भी झुरि नहीं।

(5) चाटा– (अनघड़ पत्थरों के ढेर) पात्थरों रा एक चाटा लाओ।
(चाटना) सै हांड़ा ब्रैलियै चाटा।
(साफ करना, लूटना) सै चाटा तीनै भीतरी।

(6) बासि (बसोला) – तीनै लाकड़ि बासियै काटि।
(बाद में) तू आजै बासियै।
(बासी) बासुओ दौ नाज न खानो चैहो।
(बिरटी) तेसरो किलटा तो बासियै भरौ दो।

(7) छाड़ (छोड़ देना)–तेसरा पीछा पोरा छाड़ (या) छाड़ बे नागरू बामणिये गै, इनाबे पापी रा गांव (लोकगीत)।
(बाजी) – ताशौरी एक छाड़ तौंई लाओ मिं।
(लगाम) –छाड़ पटाका, आपू भागा।
(चोट, दुःख) तेसरै आपणै भाई री मौती री छाड़ न सहैवी।

(8) **छिटकी** (छड़ी) – तीसैं ग्वालटीयैं छिटकीयैं छुग्रां ।
(पतली) – सैंग्रौ छिटकी जेही ।
(छिड़कना)– पानी रैं एक छिटकी भी काफी ग्रौ
(ग्रंशमात्र)-सैं न देग्रौ नाजौ रि एक छिटकी भी न ।

(9) **फाटा** (पैदा हुग्रा) –सोपो कोठौ फाटा, एहुरा, चौजौ रा ।
(फट जाना) – तैंसरा पाजामा ता फाटा दौ ।
(त्वचा खराब होना) – जैं हाथ फाटा दौ, ग्लेसरीन लैं ।

(10) **बरतन** (खाने, पीने का सामान) दैवली खि एक बरतन गीन्हे ।
(सम्बन्ध) तीनैं दीती बर्तन ।
(उपयोग)– चीजौं री बरतन थेवरी चैंही ।
(व्यवहार) – तेसरी मांछौ संगैं बरतन खराब ग्रसौ ।

(11) **जाला**–(जाएगा) – सै घौरैं डेवि जाला ।
(गंदा, फुहड़) – सैं जाला मांछ, झुड़कै भि नहीं बामि जाणदा ।
(जलाया) – ग्रागि रा गैंठा जाला ।
(जाल)– ग्राखि गांव का जाला जेहा दीशौ ।

(12) **घींडो**– (लड़ना) तीसैं बाड़ी जेहो घींडो ।
(मिलाना) – का घींड़ो माथा ?
(खराब करना) – सारो तौंग माटे घींडो ।

(13) **दाढ़ी** (श्री मती जी) दाढ़िए ! एबैं का बोलू ?
(दाढ़ी) – लाम्बी दाढ़ी ग्राला कुण ग्रसौ ?
(दाढ़) – तीसौ रै लागी ग्रौ दाढ़ी दी ।
(नीचे लगना) ग्रां नहीं खांदा दाढ़ि ग्रालै चावल ।

(14) **गाढ़ी**– (निकालना) –चोर देखियो, तीनै गाढ़ि खोखरी ।
(घनी)– ऐंह दाल बणी गौई गाढ़ि ।
(बात निकलना) – तों का गाढ़ि एजी ?

(15) **गाग्रो** (गाये)–गाग्रो केति दूध देग्रौ ?
(गाना) – गाग्रौ बाधैं झौणैं ।
(प्रशंसा) – खाग्रौ का लागौ, जो गाग्रौ लागौ ।
(भली)– सैं न पूरी गाग्रौ ।
(गाहना) – जौ रा एक खौला गाग्रो ।

(16) **दाग्रौ**– (मौका)– तीनैं देखा न ग्रापना दाग्रौ ।
(चोपड़ में खेलना) – दाग्रौ कुण देग्रौ ला ?
(प्रतीक्षा) मौ एभी तौंई दाग्रौ ।

(17) **बौईर** (युद्ध)–पुराने जमाने दे बड़े बौइरौ हुग्रौ थे ।
(दुश्मनी) – कौसि संगे बौइर ठीक नही ।
(ग्रौरत) – बाइरौ चैंहीं छांटी पातली, मुंडा जुल्फी ग्राला रे ।
(श्री मान जी) – बौइरिया ! तूहें लाग्रालै रेको ही !

(18) **भांड**– (गाली देना)– सभी सामनो भांड नहीं लाई।
(बर्तन) – बड़ो भांड कोठो ग्रौ?
(गाली देने वाला) – सै ना भांड, तेस दौ बोचै।

(19) **सुइने**–(सोने की) –घौड़ी बाजू दी लाई सुइनै जंजीरा।
(सपने) – राति सुइनै मिलि रै।
(सुई) – सुइनै सींव।

(20) **काखड़े** (ककड़ी) – काखड़े खाग्रो।
(सख्त)– मोना लागै म्हारै चूटदे, तेरे काखड़े बोले।
(कठिन)–तेसरै नहीं कोरिदो काखड़ो काम।

(21) **सीग्रो** (सीना) –कुरता कौसखै सीग्रौ?
(शेर) – सीग्रौ रा लागा सैव।
(सी-मिट्टी की द्राड़) –सीग्रौ दिन्दै बेरै भांडो मिलो।
(सीता जी) – सीग्रौ रो हीकड़ू लागौ रामा।

(22) **ढाल** (नमस्ते) नोटी ग्राजि हाजरू इन्हें ढाल भी न पाई।
(ढाल) – ढ़ाल तलवार उठवियौ केरखा डेवुग्रा?
(खेत की श्रृंखला)–एजा ढाल ग्रो तेसरा।
(गिराना)–एस पानी उटो ढाल।

(23) **चीणे** (बनाए) – घोरौ तो चीणै नैणा लाड़िए, लोहे घड़नी गजालो?
(ग्रनाज)–चीणै रै चणैवल भि खाणै ग्रो?
(तीनो) – सै गोए चीणै पाकड़ि।

(24) **शौड़ा** (बुरा) – सै ग्रौ शौड़ा मांछ।
(सड़ा हुग्रा) – सैब ग्रौ शौड़ा दौ।

(25) **चूड़ा** (सिर की चोटी) – चूड़ा कैंहीं काटा माथा?
(नीच जाति)–सै चूड़ा कैंहीं नहीं ग्राजा।
(चूड़ी) – तीसौ रा चूड़ा कोठा ग्रौ।

(26) **दांव** (मवेशी को बांधने की रस्सी)– इन्हौ गोरु दांव दे बानौ।
(फांसी) – सै मौरि दांव लाईयौ।
(मौका) –तेसरा दांव लागा लौ तौ देखि जालि।

(27) **धैन** (ध्यान) –तेरा धैन कोठा ग्रौ?
(धन्यवाद) –धैन तेस परमेसरौ री माया।
(घर की लड़की) –धैन ग्रागौ खि, कुकुर ग्रागौ खि।

(28) **टैली** (ग्रावाज)-तेस खै टैली लाग्रौ।
(कपड़े का टुकड़ा) – एजी टैली कोठौ दि लाग्रौ।
(शोर मचाना)–तीनै पाई टैली।

(29) बीशा (20)–बीश, झोणौ आजै।
(विष)–बीश लागौ, हाथ धोग्रौ।
(घातक जादू) –जौनसार बावरौ दिशि को बीश देयौ।

(30) तोल (नीचै)–तेसरो घौर तोल ग्रौ।
(तोलना)–थेवरो तोल लालिया।
(परखना) –सैंग्रो तोलो तौ पहलै।

(31) बलि (चढ़ावा)–इत्थी कैहीरी बलि लागौ?
(बलि का पशु) –बलि लागौ बाकरै री।
(पौराणिक राजा का नाम) बलि राजेया जौगनौ तेरौ।
(शक्तिवाली) –सै राक्षस बड़ा बलि ता।
(सर्वस्व न्यौछावर)–तेरी बलि जाई लो।

(32) माला (हार)–तीसौ रे सोने री मालाति पाड़ि दौ।
(पंक्ति)–सभियै नाचौ माले दै।
(पूजा के मणके)–बौसौ माला गोई फेरी।

(33) फड़ाको (धूल झाड़ना)–तौ झुड़का फड़ाको बौ?
(डांटना)–सै फड़ाकौ बै एहरी सै भि याद कौरौ होला।

(34) डाल (टहनी)–बिनि बागरियै डाल नहीं हिल्दी।
(डालना)–ऊटो डाल।
(कद)–केतना बड़ा डाल ग्रौ एसरा।

(35) पौल्टा– जुग पौल्टा, तूहैं न पोल्टै।
(द्रांति इत्यादि तेज करने का पत्थर)–पौल्टा कोठा ग्रौ, मेरे दाची घोशनी ग्रौ।
(फिरना)–पौहले बोलौ था देऊला, बासियै पौल्टा पोरा।

उल्लिखित उदाहरणों में सब प्रकार के अर्थ, परिवर्तन, अर्थ-विस्तार, अर्थ-संकोच और सम्बन्धांतरण मिलेंगे जो किसी भी भाषा के विकास-क्रम में प्रायः होते हैं। इन अनेकार्थक शब्दों में कोई अर्थ-विस्तार के कारण, कोई अपकर्ष और कोई मूर्तीकरण के कारण तथा कोई किसी और प्रक्रिया के कारण आ जाता है। निम्नलिखित शब्दों के यौगिक अर्थ और रूढ़-अर्थ की तुलना की जाए तो ज्ञात होगा कि आरम्भ से ही अर्थ संकोच चला आ रहा है।

चढ़ि (उपर चढ़ना), सेष, बूदा (छोटा साफ करने का कपड़ा), छोटा।
घड़ी (मिट्टी का बर्तन) घड़ना, ढलि (झुकना) गिरना, प्रायः उपसर्ग अथवा प्रत्यय ऐसे हैं जो अर्थ-संकोच भी देते हैं।
दो (दो), दोहची (दूसरा घर)।
छांट (बढ़िया), छांठी (पतली)।
छोशनो (मक्खन), छोशनी (मालिश करना)।
झौरी (चिन्ता), झुरना (पछताना)।

कभी कभी एक शब्द अपने पास आस पास के संदर्भों को आत्मसात कर लेता है। इस प्रकार समास के एक अवयव विशेषण आदि के लोभ से अर्थ-संकोच की यह प्रक्रिया सहज और सामान्य रूप से चलती रहती है।

(क) जन्माष्टमी–कृष्णजन्माष्टमी।
रात्री– शिवरात्री।
नाज–सतनाजा।

(ख) चाल – खोटी चाल, नालू–फुकरनालू।
सींग –तरसींगा, जुग – सतजुग।

प्रत्येक वर्ग, व्यवसाय और विशेषज्ञ अर्थ-संकोच करके अपनी परिभाषिक शब्दावली सिद्ध करता है। गोली तो कोई गोल वस्तु हो सकती है, लेकिन दर्जी, शिकारी, सैनिक और वैद्य के लिए इसका सम्बन्ध सीमित और विशिष्ट वस्तु से होता है। बोली का अर्थ साधारण व्यक्ति के लिए भाषा वैज्ञानिक और नीलाम करने वाले के लिये अपनी सीमा के अन्तर्गत विशिष्ट होता है।

धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में प्रायः शब्दों का अर्थ-संकोच हुआ है, जैसे श्राद्ध, जात्रों, प्रसाद, बरत, पवास इत्यादि।

पर अर्थ संकोच की अपेक्षा अर्थ-विस्तार की प्रक्रिया कम होती है क्योंकि भाषा का लक्ष्य विचारों को अधिक से अधिक स्पष्ट रूप से प्रकट करना होता है। अब भी पहाड़ी में ऐसे कई शब्द हैं जिनका सम्बन्ध व्यापक है, जैसे बात, आच्छों फुडी, घोटी, आदि। वास्तव में साहित्य के भाषा की अपेक्षा बोलचाल में ऐसे कई शब्द हैं जिनका सम्बन्ध व्यापक है, जैसे शब्दों का आधिक्य होता है और उनका प्रयोग भी सुलभ और व्यापक होता है।

सम्बन्धांतरण – शब्दार्थ सम्बन्ध का अन्तरण इसलिए स्वाभाविक रूप से हो जाता है कि कार्य और कारण, पूर्ण और अंश, स्थान और उसकी उपज आदि का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। ये समान विचारों अथवा एक ही विचार के दो पहलुओं में अर्थांतरण हो जाता है। संगति का प्रभाव शब्द पर अवश्य पड़ता है। अच्छे के साथ अर्थ अच्छा, बुरे के साथ बुरा अर्थोत्कर्ष और अर्थापकर्ष। जैसे कृष्णा का अर्थ तो काला है, लेकिन भगवान कृष्ण के संबंध से लोग कृष्णदास, कृष्ण दत्त, कृष्ण सिंह, कृष्ण कुमार, इत्यादि। इसी तरह भीष्म और भीम का अर्थ भयानक होकर भी महापुरुषों के नाम होने के कारण इनका अर्थ योद्धा और दृढ़-प्रतिज्ञ होता है। इसी प्रकार बुरी संगति का प्रभाव भी जल्दी पड़ता है। जैसे हूल (दुष्ट), चूड़ा (गंदा), दालजी (दरिद्री) होछा खोशिया (घटिया आदमी), इत्यादि।

ऐसे ही अनेक शब्द हैं, जिनका सम्बन्ध व्यवसाय, परिस्थितियों, अशिक्षित की सांस्कृतिक चिंतनप्रणाली, विनोद, दलबन्दी, जातीय विद्वेष, साम्प्रदायिकता, राजनीति, आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक जीव और अतिशयोक्ति से जुड़ कर बदल जाता है।

ऐसे असंख्य शब्द पहाड़ी के विपुल शब्द-भंडार में यत्र-तत्र-सर्वत्र उपलब्ध होंगे, जिनको सामाजिक परिवर्तन और समय की तीव्र आंधी में धूल धूसरित होने से बचाकर, उनको सुरक्षित रखने के प्रयत्न कभी भी कम नहीं होने चाहिए।

—कुमार भवन, शिमला-6

हिमाचली लोकगीतों में सामाजिक चेतना

—डा० गौतम 'शर्मा व्यथित'

लोकगीत लोकमानसी सम्पदा है। इसका सीधा तथा स्पष्ट सम्बन्ध 'लोक' से है। लोक गीतों के प्रति पारिभाषिक प्रतिमा-स्थापना करते हुए विभिन्न प्रश्न अनायास मानस-पटल पर तिरने लगते हैं ; लोक द्वारा रचे, लोक के लिए, लोक-विषयक गीत आदि। लोकगीतों के प्रति स्थापित अब तक के मानदण्डों के आधार पर यह सहज स्वीकृत है कि ये गीत लोक-विषयक होते हुए भी अज्ञात रूप में लोक ने रचे हैं जो आधुनिक भावों से अछूता, शिष्ट-समाज से पृथक सा जीवन व्यतीत करता है। सरलता, निश्चलता, स्पष्टता, प्रेम-सदव्यवहार तथा आदि-मानवीय सांस्कृतिक सामाजिक दृष्टिकोण उसके जीवन के आधारभूत तत्व हैं। वह आज भी वैज्ञानिक प्रभावों से प्रभावित होता हुआ भी अपनी परम्पराओं से चिपका है, बन्धा है।

लोक-साहित्यकार शिष्ट साहित्यकार की अपेक्षा भावानुभूति में अधिक कुशल तथा पात्रों के वास्तविक जीवन से अधिक संपृक्त रहता है। वह स्वयं को समाज से पृथक शिष्ट, आदर्शी आदि न बनाकर सामान्य लोकमानस के साथ जीवनयापन करता, उनकी अनुभूतियों का हिस्सेदार बनता, वास्तविकता से अपने कथ्यों को उठाता, गद्य-पद्य रूप देता है। वह सच्चे रूप में एक सामाजिक प्राणी है, जो समाज में जन्मता, पलता बढ़ता और जिया-मरा करता है।

सामयिक प्रभाव सामजिक ढांचे को प्रभावित करते हैं। सारा सामाजिक जीवन आन्दोलित हो उठता है। सामयिकता का स्फुलिंग उसके प्रत्येक तत्व में संचेतना भरता परिवर्तन का नाद उत्पन्न करता है। सम्पूर्ण लोकजीवन में सहज उद्वेलन आ जाता है। धर्म, इतिहास, राजनीति, संस्कृति, आचार-विचार, आहार-व्यवहार, आदान-प्रदान, वाणिज्य-व्यापार, अथवा विश्वास, वस्त्र आभूषण, सब में अनायास सा परिवर्तन आ जाता है। और सभी लोक कवि के हृदय को प्रभावित करते युगवाणी को मुखरित करते हैं जो युगभावना का बल पकड़ कर सार्वजनीन बन जाती है। अब तक उपलब्ध पारम्परिक लोक-साहित्य का प्रत्येक तत्व इस सहज परिवर्तन से अछूता नहीं रहा है। समयानुरूप लोकधारणा बदली, उसके जीवन के प्रत्येक पक्ष ने क्रमिक करवट ली। लोककवि ने उन्हीं भावनाओं को पकड़ा, उन्हीं अनुभूतियों को वाणी दी, जिसे समाज सहज-भाव से स्वीकारता निरन्तर अपनाता रहा एक निजी सम्पत्ति मानकर। अतः लोकगीत एक सामाजिक सम्पत्ति, जातीय ज्योति, परम्परा प्रवाहित आनन्द का माध्यम, इतिहास का वास्तविक रूप, सामयिक घटनाओं के विश्वकोष और सामाजिक चेतना के मुंह बोलते चित्र हैं।

हिमाचल प्रदेश की व्यापकता निस्सन्देह है। इसका परिवेश अत्यन्त विस्तृत, घाटियों, नदियों, पहाड़ों तथा समतलों में भी कटा-फटा, आज भी हिमाचली जीवन में समानता लाने

के सद्प्रयासों में एक अवरोध सा बना है। इसकी सांस्कृतिक संचेतना, सामाजिक संसर्ग, शैक्षणिक प्रसार कई स्थानों पर पूर्ववत है। अतः यहां के प्रत्येक जनपद की निजी सामाजिक आस्थायें, सांस्कृतिक चलन तथा नैतिक मानदण्ड हैं, जो यहां के जनपदीय लोकगीतों में सहज प्राप्य हैं। इसके प्रत्येक क्षेत्र में पारम्परित लोकगीतों में मूलतः सामाजिक चेतना के स्वर प्रतिगुंजित मिलते हैं। इनका आकार, शब्द-लालित्य, शैली वैचित्र्य, कथातत्व वही है जो स्थानीय समाज का प्राण है। इतका व्यापक कैनवास विभिन्न तैलचित्रों से भरा, विभिन्न रंगों से सजा, प्रत्येक कोण से एक अनूठा दर्शन देता है। विभिन्न चित्रकारों ने इसे निजी साधनाओं से अनुभूति के रंगों से उकेरा है। वस्त्र, भोजन, भवन, मानवीय तीन आवश्यकतायें विविध आयाम लेकर उसके मन को घेरती है। जिन्हें उसने अनेक कोणों से देखने की चेष्टा की है। अध्ययन-सुविधा की दृष्टि से इसे इस प्रकार रखा जा सकता है।

(क) हिम-समाज में नारी के प्रति विभिन्न दृष्टि कोण और उनका लोकगीतों में प्रतिपालन, यथा—पत्नी, सौत, बहू, सास, मां, जैठानी, देवरानी, ननद आदि।

(ख) भाई-भाई, देवर भाभी, बहन-भाई के प्रति विश्वास एवं आदर भावनाओं का गीतों में संगुफन।

(ग) संयुक्त परिवार के प्रति आस्था और उससे सम्बन्धित भावों की लोकगीतों में व्यंजना।

(घ) धार्मिक-विश्वास, सामाजिक-आस्थायें तथा व्यावहारिक रूढ़ियों के प्रति आस्था-भावना और उनका लोक-गीतों में वर्णन।

(ङ) सामाजिक प्रभावों, यथा—स्वतन्त्रता, कृषि, बचत, परिवार-नियोजन आदि भावों का समाज में प्रभाव तथा उनका गीतों में सहज-प्रवेश।

(क) विषय-बोध हेतु इनकी संक्षिप्त व्यंजना प्रस्तुत है। हिमाचली लोक-गीतों का सम्यक अध्ययन करने पर हम उसमें नारी के दो रूपों की अत्यधिक व्यंजना मिलती है, अर्थात् (i) भावना-प्रधान एवं आचार-युक्त—मां, पत्नी, प्रेमिका आदि।
(ii) संकुचित हृदय, कर्कशा, दुर्मना, सास, सौत, ननद आदि।

छिञ्ज, पक्खड़, फाटेहड़ियां, लोका, साका आदि लोकगीतों में प्रायः नारी उपर्युक्त प्रत्येक रूप के अनेकों चित्रण मिलते हैं। ऐतिहासिकता के प्रभाव में धार्मिक, सामाजिक तथा नैतिक मर्यादाओं के भीतर लोक-समाज तथा सनातन सत्य पर विश्वास रखने वाली लोक नारी परिवारिक पिंजड़े में बन्द उसके सदस्यों के किन-किन कुकृत्यों का किस-किस प्रकार भोजन बनती रही हैं, इन गीतों का मूलकथ्य है। कुछेक उदाहरण प्रस्तुत हैं:—

कुल्लुई लोकगीतों में या बिशू उत्सव पर गाई जाने वाली एक छिञ्ज लीजिये:—

बौड़े-बौड़े दियाड़आ सौकली रात्री,
बीरे-पराहुणों आओं आज की रात्री,
खाये-खाये वीरा तू गौरी छआरे,
जबी आए मेरी शशुड़ी खोड़िए कुमारें ....

भरिया घड़ोलू लस्सिया मिणीं पर धरया,
चुकी नि दिन्दा पापी कोई ।
घरे जे आई सस पुच्छणा जे लगी
ऐडड़ी देर कियां लाई!

किन्नी तां वित्ती तिजो गले जो जुगनी,
किन्नी तां दित्ता चौसर हार!

लता दी मारी ससु मुक्का दी मारी
पौड़ियां दित्ती रड़काई ।
छिह दो महीनेयां दा बालक छुटेया,
कुड़ी छुटी मटयार ।।

इतना तक ही नहीं, निर्दयी सास ने यह विचार कर कि उसके कुकृत्य पुत्र तक न पहुंच जाएं, उसने बहू को विष देकर चिर-निन्द्रा की भेंट करने में भी पाप नहीं समझा। एक गीत की पंक्तियां देखिये :-

उत्तरे कनारे पुतरां पुठियां समाधीं,
औयू तां सुत्ती तेरी नार ए।
खरी तां कित्ती तेरिये माए गुमानणी,
हंसां दी जोड़ी बच्छोड़ी ऐ ।

(ग) लोभ में आकर उसने पुत्री के सुहाग की चिन्ता न कर 'जवांई को' विष देकर या पुत्रों को बहका कर मरवा डालने में भी किसी प्रकार की झिझक नहीं समझी, यथा :—

पुतरे जो रिहन्नी घियो पाई खिचड़ी,
जुआइयें जो रिहन्नी जहरें खीर ।
अम्मा दे जाये होर भी हटी घरें आये,
ससु दा जाया कुदी आया !
अप्पूं तां लसियों माये सुहे-सुहे कपड़े,
धीयां दा मन्दड़ा हाल, कि भोरे बालया ।।

(घ) देवर भाभी का हास-परिहास भी इन गीतों का सरस कथ्य रहा है। पति के विदेश जाने पर विछोह-पीड़िता नायिका का वही एक मात्र सम्बल रहता है। स्वतन्त्र सानिध्य सामाजिक प्रतिबन्धों तथा धार्मिक मर्यादाओं का उल्लंघन भी करता रहा है। लोक कवि ऐसे चित्रणों से नहीं चुका है। नायक भी सामाजिक प्रतिमानों की रक्षा में किस कदर स्वयं को स्वाहा करता अनिच्छा पर भी सब कुछ स्वीकारता रहा है। ऐसे सन्दर्भ भी परम्परित लोक-गीतों में सहज उपलब्ध हैं। परन्तु बड़े भाई के लिए छोटा भाई किस कदर मिटता रहा। वह उस की रक्षा उस की

प्रसन्नता सुख सुविधा के लिए कुछ नहीं करता रहा। बिलासपुरी गीत "मोहना" से स्पष्ट लसित होता है, यथा :-

आया मरना ओ मोहणा आया मरना,
भाइयां री कीतिया आया मरना।
फांसी चढ़ना ओ मोहणा फांसी चढ़ना ।। आदि ।।

तात्पर्य यह कि भाई का अपराध अपने सिर लेकर मोहना फांसी पर लटक गया। जबकि राजा तथा उसकी मां अन्त तक उसे मनाते रहे कि तुम झूठ मत बोलो, सच सच बता दो, तुम्हें छोड़ दिया जाएगा। परन्तु भाई-धर्म का वचन वह कब छोड़ता !

(ङ) पहाड़ी समाज में राजा कितना प्रतिष्ठित व्यक्ति रहा। वह उचित अनुचित जो करता रहा, प्रजा उसे मूक बनी सहती रही। अपने राज्य में उसे जो भी जिस किसी की सुन्दर स्त्री दिखाई देती वह उसे उठाकर अपने रंगमहल में पहुंचा देता। "नोखू गद्दण" का गीत इस सन्दर्भ में उत्कृष्ट उदाहरण है :

नगारे चुकी राजा हेड़े जो चढ़ेया,
गद्दण तमाशा जो आई,
मेरिया बांकिया गद्दिया।
बांही ते पकड़ी गद्दण डोले जे पाई,
महलां दित्ती पुजाई ।। आदि ।।

दूसरी ओर लोक कवि यह कहने में भी नहीं डरा है कि—

अमी चन्द राजा खूए पर होंदा,
दींबी पाणिये जो आई।
सदियो चारां कहारां जो,
दींबी डोले जे पाई।

छोड़-छोड़ राजा मेरे सलुऐ दा लड़,
मैं हां नार पराई।
मैं किआं छडां सालूए दा लड़
मिजो परीत जे आई ।। आदि ।।

इसी प्रकार के उदाहरण "छेल राजपूता", "मियां कने चम्यारी" आदि गीतों में भी उपलब्ध होते हैं। समाज के प्रतिष्ठित वर्ग ने साधारण वर्ग को सदैव अपनी इच्छा पर रखा। 'कुन्जू कने चंचलो' के गीत में देखिये किस प्रकार कुन्जू को चंचलो का स्नेह त्यागने में विवश कर उसे बाहर भेज दिया जाता है और पीछे से चंचलो के पिता को डरा धमका कर कुपात्र को चाहने हेतु विवश किया जाता है। आशाओं को रेत की ढेरी सदृश गिरता देख चंचलो कुन्जू की राह विसूरती अन्ततः चल बसी। रान्झू फूलमू, सुही भूखू आदि की प्रणय-गीतियां भी ऐसे उदाहरणों से भरी पड़ी हैं।

(च) इसी प्रकार जन-साधारण के दुःख दर्द या आभिजात्य वर्गीय उत्पीड़न के प्रति जब कभी भी किसी ने स्वर उठाया, उसका सर कलम कर दिया गया। बहु को प्रत्युत्तर देने पर जलती लकड़ी से झुलस दिया। अछूत को गोली का निशाना बनाया आदि। 'होकू की हार' नामक सिरमौरी लोक-गीत में कवि यह स्पष्ट बताता है कि 'होकू' भी जन कल्याण के लिए सामन्तशाही के विरुद्ध आवाज़ उठाने पर किस प्रकार मेहता के इशारे पर "जुलफिया" ने निहत्थे होकू का वध करने में बिलम्ब नहीं किया, देखिये :—

होकु गिआ राउतो तोबे मुजरे दा जाई,
तोबे मिआ नेगी जुलफिया सामने आई,
होकू राउतो री पोडी कुयोढ़ी लाशो,
तेसरा होआ ब्यालखे सुरगो वासो ॥

(छ) सिद्ध—नाथ परम्परा-प्रभाव भी यहां के आंचलिक लोकगीतों में यत्र-तत्र सर्वत्र मिलते हैं। "नज़र" से बचने के लिए पहाड़ी स्त्रियां क्या क्या करती हैं, ज़रा देखिये :—

साड़े पहाड़े दियां मुर्ख जनानियां,
मैलियां कूचैलियां कपड़े आं लांरियां।
मुन्नुए दे मत्थे काला टिकलू लांदियां।

और कवि हरनाम दास क्या कुछ कह गए हैं, यह भी द्रष्टव्य है—

मैं तां मुन्नुएँ वा पात्तर पाणा,
देरे लड़ियां पर जादू सहहाणा।
अड़ेस-पड़ेसियां छाड़-छडाणी,
जोगिये दातरा बजाणा।
साधुआं, ब्राह्मणां रा गुण नी लगदा,
चेला चमार सदाणा ॥ आदि ॥

दान सम्बन्धी सामाजिक भावनाओं को भी कितनी बारीकी से उकेरा है, ज़रा देखिये :—

असां मणसणी गा पराणी,
खादी धानि पीता पाणी।

अर्थात जो वस्तु उपयोगी न रहे उसे पंडित जी को दान कर स्वयं को दानी लोगों की सूची में गिनने का गौरव भी कुछ वर्ग सहज भाव से करते आए हैं।

घर में पति को स्त्री किस कदर घरेलू कार्यों में व्यस्त रखती है, और वह रामनाम जपने की बात को किस बहाने से टालता है, निम्नलिखित पंक्तियां प्रस्तुत हैं :—

हरी मैं तां किग्रां करी जपां तेरे नामें,
जोरू मिंजो लाई छड्डी नित क्यों ।
रोटियां पकायां मुन्नुएं खलहायां,
ग्रज ग्रोणा मुन्नुएं दे मामें ।।

(ज) सामयिक क्रमिक परिवर्तन एवं युग-चेतना लोकमानस को उद्वेलित करते ग्रनेक दिशाग्रों में सहज परिवर्तन लाती रहती है । दुर्भिक्ष, स्वतन्त्रता, शिक्षा-प्रसार, स्वच्छता, कृषि-विकास, महगाई, परिनियोजन ग्रादि युगीन समस्याग्रों ने स्थानीय लोकमानसी चेतना को प्रभावित किया है । गांव में विद्यालय खुलने पर लोग कितने प्रसन्न हैं, किस कदर गांव के वयस्क ग्रनुभवशील व्यक्ति सब से ग्राग्रह करते हैं कि स्कूल में पढ़ने जाग्रो, इससे ज्ञान ज्योति जाग्रत होती है, ग्रादि । देखिये कुछेक पंक्तियां :—

म्हारे पौढ़दे जाणा वे दौलतरामा पौढ़दे जाणा,
बिना पोढ़ियो होंदो नेई रे जुगा नामा ।
चाहे मास्टरा कान पाकड़ो चाहे मारा डोंडा,
पाछे दे पोढ़यो ए सबी भुली जाणा ।
विदिया ग्रोहों सब रत्ना री खान,
छोठू-छोटियो सब पढ़ों तो बुढ़े रो जवाना ।।

महासू की प्रसिद्ध नाटी में लोक कवि शिक्षा सम्बन्धी भावना को किस प्रकार प्रचारित करता है । युग चेतना के ग्रनुरूप शिक्षा का मुख्य उद्देश्य किस कदर झांका है, स्पष्ट द्रष्टव्य है :

(2) कृषि के प्रति सामाजिक संचेतना का एक रूप देखिये :—

पधरे ग्रवड़ा बंगलु पुग्राणा
बिच बगीचड़ी लाणी ग्रो ।

उचड़े-उचड़े बैल ल्याणे,
डुंगें तां सिद्धे हल चलाणें,
छैल तै नोंएं बीज जे बाहणे,
फसल तां ग्रपनी बधाणी ग्रो ।।

सेविंग सार्टिफिकेट लइए—
बारहा तां बरिह्यां होई जांगे
डयोडे दस्सां दे पंदरा
मुनुएं पढ़ाणे दे कम्में ग्रांगे ।।

(3) बचत लहर का भी एक दृश्य देखिये :–

(4) भूमि सुधार सम्बन्धी बन्दोबस्त ग्रादि कार्य भी लोक-कवि के स्वर से नहीं निपटे हैं । यह गीत ग्राज भी सुनाई देता है कि :—

पहला बन्दोबस्त वारने कीता
ग्रज्जे तिकर दिन्दे ग्रोय लोको ।

दिक्खा तमाशा बारन दा।
बारन साहबें खानदान बणाये,
दित्तियां बख्शी जगीरां लोकों।

(5) समाज को नशीली वस्तुओं के प्रयोग से भी लोक कवि किस कदर सचेत करता रहा है, ऐसे गीत भी उपलब्ध है, यथा :—

जली बो जाए इस तमाकुए दा पठ्ठा,
इन्नी बे बकाया मेरा सुयने दा कंठा,
ढोला छोड़ी देणी चिलम तमाकुए दी।

पत्नी की बातों का ही पति पर तुरन्त प्रभाव पड़ता है। तभी बात लोक कवि ने यह उसके मुंह से कहलाकर सामाजिकता को प्रकट किया है।

समाज में अच्छे बुरे सभी प्रकार के लोग रहते हैं। इन दोनों के जीवन के प्रति पृथक दृष्टिकोणों को भी इन गीतों में सोदाहरण व्यक्त किया गया है :—

बारहा को जांदिये बी हाथा लेआं लोटा,
देखी-सुणी तु चलणा जमाना लगी रा खोटा।
हाए बाबू रेंजरा वासी नगरा तेरा।

उपर्युक्त संक्षिप्त विवेचना से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि हिमाचली लोक-गीतों के प्रचलित किसी भी गीत-रूप को लें, उसकी आत्मा में सामाजिक चेतना का प्राण स्फुरित मिलता है, भले ही उसका आवरण या ढांचा धर्म, संस्कार, प्रणय, श्रम, सुधार, परिवर्तन किसी भी विषय को लेकर रचा गया हो। लोकगीत लोक-दृश्य से फूटते हैं। यह ऐसी ऋचायें हैं जिनमें युग बोलता है, समाज का प्रत्येक सदस्य, प्रत्येक वर्ग क्या प्रत्येक इकाई का प्रत्येक पक्ष बोलता है। इसके शब्द शब्द में सामाजिक चेतना का स्वर मिलता है ऐतिहासिकता के प्रवाह में समाज के बदलते स्वरूप किस प्रकार विविध आयाम लेकर विकसित होते आ रहे हैं, इन गीतों के अध्ययन से सहज द्रष्टव्य है।

—राजकीय शिक्षा कालेज,
धर्मशाला,
हिमाचल प्रदेश।

मण्डयाली लोकगीतों में भाव-सौन्दर्य

—डा० कांशी राम 'आत्रेय'

लोकगीत लोक जीवन का काव्य है। संगीत सम्राट शचिन देव वर्मन के मत में लोक गीतों में कविता का अपना महत्त्व है जो संगीत के पक्ष से किसी भी तरह कम नहीं। जब पण्डितों की काव्य-भाषा स्थिर हो कर उत्तरोत्तर आगे बढ़ती हुई लोक भाषा से दूर पड़ जाती है और जनता के हृदय पर उसकी प्रभाव डालने की शक्ति क्षीण होने लगती है तब शिष्ट समुदाय लोक-भाषा का सहारा लेकर अपनी काव्य-परम्परा में नया जीवन डालता है। आचार्य प्रवर शुक्ल जी के उक्त मत में लोक गीतों की काव्यात्मक महत्ता व्यक्त होती है। लोकगीत मूलभूत अनुभूति-प्रधान काव्य है।

मण्डी क्षेत्र के लोक गीतों में अन्य लोक गीतों की भांति भाव-बिन्दु वाले मुक्तकों तथा लघु आकार वाले गीतों की भरमार है। इन गीतों के सम्बन्ध में बिहारी के मुक्तकों के सम्बन्ध में कही गई उक्ति 'देखन में छोटे लगें और घाव करें गम्भीर' सत्य प्रमाणित होती है। इस जनपद के लोक गीतों में मनुष्य जीवन के भावों की विविध रूप की अभिव्यक्ति हृदय की मुक्तावस्था में हुई है। घनीभूत भावों का वाणी द्वारा विनिसरण ही काव्य है। इस जनपद के लोक गीतों में भावनाओं की सबल अभिव्यक्ति पाई जाती है। इन लोक गीतों में सर्व प्रथम नारी हृदय की विरह वेदना तथा शृंगार ही व्यापक रूप में वर्णित है। साहित्य-शास्त्रियों ने शृंगार रस को रस राज की संज्ञा दी है। मण्डयाली लोक गीतों में भी शृंगार रस के दोनों रूपों का प्रचुर मात्रा में वर्णन हुआ है। संयोग शृंगार में भावों को घनीभूत होने का अवसर कम रहता है। विप्रलम्भ शृंगार में ही भावों की कवित्वपूर्ण अभिव्यक्ति सम्भव है; जहां जड़ चेतन का भेद भूल कर हृदय के स्वर फूट पड़ते हैं। इनकी भावप्रवणता एवं रसवत्ता के क्रमशः गीतबद्ध सोदाहरण रूप इस प्रकार हैं:—

ओ गया भीता था साजिया बाहिया,
हुण आई भी लगेआ चैत्र-बसाख ।
ओ सदा रे आ महिमीआ ।

अपने परदेशी प्रियतम को सम्बोधित करती हुई नायिका कहती है कि प्रियतम! तुम संक्रान्ति के निकट के समय चले गए थे अब चैत्र-बैसाख का मास आ गया। ओ सदा के परदेशी प्रियत्तम!

लोकगीत के अगले बोल इस प्रकार हैं :—

76

ओ बागें ता तेरेआं आम्ब-केले पाके,
होर भी ता पाके सरतवाज ।
ओ सदा रेआ महिमीआ ।

प्रियवर ! तेरे बागों के आमों और केलों के पकने का समय भी निकल चला । सरताज, गेंदा फूलों की बहार आई किन्तु अभी तक भी तुम परदेश में ही रमे हुये हो । ओ सदैव के परदेश वासी ! नायिका अपनी वेदनापूर्ण मनोदशा लोक-गीत के बोलों में आगे इस प्रकार व्यक्त करती है :–

बारांह ता बरसां री ब्याहो ढोला,
ठारहां गई बालड़ी बरेस ।
ओ सदा रेआ मुसाफरा बेदर्दिया ।

ओ निष्ठुर प्रियतम ! ओ बेदर्दी ! बारह वर्ष की आयु में विवाह हुआ था और अब अट्ठारह वर्ष की होने वाली हूं । ओ सदा के परदेशी प्रियतम ! नायिका नायक का ध्यानाकर्षित करते हुए हृदय की समस्त वेदना इन बोलों में उंडेल देती है :–

ओ बले सदा भी नी रहन्दी बालड़ी बरेस,
सदा भी नी रहन्दे कालड़े केस,
ओ ढोला मेरेआ बेदर्दिया ओ ।

'ओ भोले परदेशी प्रियतम ! सदा तरुणाई नहीं रहती और सदा काले केश भी नहीं रहेंगे । ओ मेरे बेदर्दी प्रियत्तम !' इस प्रकार विरह विह्वल नायिका उपचार भी स्वयं बताती है :—

ओ बदलुआं भी भेजदी विरणां तेरेआं,
ओ भल्लेआ देओरां मेरेआ ।
ओ घरें ता आओणा दिन चार ।

ओ दूर देश वासी प्रियतम ! आपके भाई और अपने देवर को आपके स्थान नौकरी पर भेजती हूं । चार दिन का अवकाश तो अवश्य ही मिल जायेगा । चार दिन के लिये अवकाश लेकर अवश्य ही घर आना होगा । किन्तु यह सर्वविदित तथ्य है कि पति को अवकाश नहीं मिल पाता है । लोक गीतकार के मानस में वेदना की पराकाष्ठा का संयोजन निम्नवत जुटाया गया है :–

बदलुआं भी नी मनदे नारे मेरिये नाजो ।
राजेआं दी नौकरी भी ता हुन्दी करड़ी ।
नाजो मेरिए, नारे नी नाजके ।

प्रियतमा ! नौकरी में बदले के प्रति-पुरुष का काम नहीं होता है । राजाओं की बड़ी कड़ी नौकरी होती है । मेरी कोमल हृदया ! प्राणवल्लभा ! मुझे तो नौकरी और परदेश भाग्य में बदा है ।

इस लोकगीत के भावों में जीवन की समूची वेदना समाज की लाज की चिन्ता किये बिना जीवन के यथार्थ अनुभव सहित सुन्दर सरल भाषा में व्यक्त हुई है। काव्य के प्राण रागात्मक तत्व तथा भाव-प्रवणता की पूर्ण अभिव्यक्ति हुई है। नारी हृदय-निसृत वेदना का स्वर भाव और संगीत का संयोग पाकर काव्यानन्द की सृष्टि करता है । विरह में निर्देशित विरहाग्नि की दशा में स्मरण-अभिलाषा, उद्वेग, प्रलाप, गुण-कथन आदि संचारी भावों की सुन्दर अभिव्यक्ति उपरोक्त उद्धरणों में हुई है।

मनोविज्ञान के आधार पर स्वकीया प्रौढ़ा नायिका के पति प्रवासी हैं । अवस्था-भेद के आधार पर नायिका प्रोषित-पतिका प्रौढ़ा नायिका है । प्रेम के स्तर पर वह समाज के भय, शंका के आवरण को त्याग कर ज्येष्ठा नायिका है । उसको स्वकीया नायिका होने का पूर्ण गौरव नायक प्रत्युत्तर में अपने सान्त्वना के शब्दों मे प्रदान करता है । नायिका को विश्वास हो जाता है कि राजाओं की नौकरी अवश्यमेव सख्त होती है अन्यथा उसके पतिदेव अवश्य घर आ जाते । लोक गीत के भावों में उद्दाम शृंगार की न्यूनता तथा शालीन अभिव्यञ्जना में प्रेषणीयता की पूर्ण सफलता और विषय-प्रसंग का चयन कल्पना, राग-बुद्धि तथा शैली का औचित्य काव्यात्मक भाव-उदात्तता का परिचायक है । भावव्यञ्जना में सुन्दर शैली में व्यञ्जन-शक्ति और प्रतीकों का आधार लेकर काव्य-गरिमा का सुन्दर और सहज भान हो पाता है । 'काले केश, यौवन तथा वाल्यावस्था के प्रतीक हैं । इसी प्रकार बागों के पके आम और केलों में शालीन लक्षणा व्यञ्जित होकर अर्थ-श्लेष द्योतक है जिस में वाचकार्थ आम केलों के पकने की बात की उपमा परिपक्वावस्था से भी की गई है । अतएव अर्थ श्लेष से उपमा का भी संयोग हुआ है । प्रेम और शृंगार के वर्णनों में मेघदूत, भौंरो, काग, कबूतर तथा हंस द्वारा सन्देशवाहक का औपचारिकता का निर्वाह हुआ है ।

इस लोकगीत में नायिका परम्परानुमोदित सन्देशवाहिक थी । औपचारिकता की अभिव्यक्ति नायक के भाइयों को भेजने की बात कह कर पूर्ण करती है । विरह वर्णन में नायिकाओं की उंगलियां विरह की घड़ियां गिनते घिस जाती हैं । विरह-वर्णन में बारह मासा का बड़ा महत्व है । इस गीत में भी बसन्त के मास चैत-बैसाख के नवऋतु आगमन में कई दिन पूर्व गये प्रवासी पति के संक्रान्ति समय के प्रस्थान की बात को गिनते नायिका के भावों में कई मधुमासों की गणना और दिन कर मास गिनते समय व्यतीत करने की सूचना व्यञ्जित होती है । लोक गीत के इन्हीं इतने शब्दों में ही भावों की अनन्त राशि निहित है । मण्डी क्षेत्र के लोक गीतों में इस प्रकार के निरन्तर विरह के पल गिनने की परिपाटी का स्वरूप-निर्वाह एक अन्य लोक गीत में भी अवलोकनीय है :—

घालुआ मजूरा ओ डेरा तेरा दूर हा ।
ओ कधी घरा औणा !

बीती गया हाड़ा बीती गया सौणा,
ग्रो कधी घरा ग्रौणा !

पानी में शहतीर बहाने वाले ग्रो प्रवासी प्रियतम ! तुम्हे कब घर ग्राना है। ग्राषाढ़-सावन के मधुमास बीत गये; प्रवासी प्रिय ! ग्राप का कब ग्राना होगा? लोक गीत की प्रौढ़ा स्वकीया नायिका ग्रपने प्रियतम की स्मृति में मास गिनती छट पटाती स्मरण प्रलाप, ग्रभिलाषा उद्वेग प्रतीक्षा के स्वर नायिका के प्रवासी पति के प्रति पूर्ण ग्रनुराग व्यक्त करते हैं। प्रियतम ! ग्राषाढ़-सावन के चौमासे के समय का ग्रन्त हो गया है। भला फिर तुम ही कहो कि तुम्हारा ग्रागमन इस के बाद कब होगा ! दीपावली के पकवान ग्रौर लोहड़ी की खिचड़ी के समय पर तुम्हारी विरह रह रह कर सताती है ग्रौर ग्राप विस्मृत हो घर पहुंच ही नहीं पाते हो। लोकगीत के ग्रगले बोल इस प्रकार हैं:—

तू घालें नालें रूलदा, तूं लकड़ी ने घुलदा,
खून तेरा डुलदा।
तू पाले कने ठरदा, बुरा हाल घरादा,
ग्रो कदी घरा ग्राग्रोणा !

इस भांति इस पूरे लोक-गीत में ग्रन्य उपकरणों के स्मरण नायक के गुण-कथन करती प्रेम परायण, स्वकीया, नायिका द्वारा भारतीय नारीत्व की शालीनता तथा पति प्रेम की ग्रादर्श ग्रभिव्यक्ति मिलती है। इस लोक गीत में विरह की ग्रभि-व्यक्ति में इस समाज की नारी की उदात्तमूर्ति का चित्र, यहां के नारी समाज की भावनाग्रों का दर्पण है। इस क्षेत्र के लोक-गीतों द्वारा 'कला-कला के लिये' के स्थान काव्य कला के सोद्देश्य होने की भी ग्रप्रत्यक्ष रूप में ठीक पुष्टि होती है। मैथिलीशरण प्रभृति कवियों ने काव्य या साहित्य में उचित उपदेश का मर्म होना ग्रौर कान्ता के समान मधुर ज्ञान प्रदान करना भी ग्रनिवार्य बतलाया है। इन लोक गीतों की नायिकाग्रों के स्वर में पर्वतीय क्षेत्र की समस्त नारियों की भावनाग्रों की ग्रभिव्यक्ति ग्रौर उनका पति के प्रेम विरहमें वर्षों बिता देना ग्रनुकरणीय उपदेश है। मानों ये नारियां ग्राज भी उर्मिला के समान विरह का ग्रादर्श समाज में पालन करती चली ग्रा रही हैं। उस पर भी वे ग्रपनी निष्ठा कम न करके इस पथ पर चलने की सतत् प्रेरणा देती हैं कि पति प्रेम-परायणा सीता, शकुन्तला ग्रौर उर्मिला के ग्रादर्शों का ग्रनुकरण ही हमारी गौरव निधि है।

ये ग्रादर्श लोकगीतकार के भावों की लड़ियों में काव्य-सृजन के समान ही ग्रपने ग्राप ग्रा जुड़ते हैं, जिनकी योजना शिष्ट कवि-वर व्योंत द्वारा करते हैं। जहां इन लोक गीतों की भाव शली में सरलता है वहां रचना में सचेष्ट ग्रादर्शवाद की उहात्मक कल्पना द्वारा या सामाजिक धरातल के परे की सृष्टि की ग्रभिव्यक्ति द्वारा स्वाभाविकता को मिटने नहीं दिया है। कतिपय ग्रन्य उदाहरणों में भी इन लोकगीतों के व्यापक क्षेत्र की सरसता का परिचय हो सकेगा। यह द्विपदी लोक गीत 'जी लोका' के बोलों में इस प्रकार ग्रवलोकनीय है:—

हाखियां रा कजला, रोई रोई डोल्हेग्रा ।
रोन्दियां री दर्द भी नी ग्राई जी लोका ।

ग्रर्थात् प्रियतम ! ग्राखों का काजल रोते रोते तुम्हारी विरह में घुल गया, किन्तु तुम्हें हमारे रोने की दया ही नहीं उपजी । ग्रागे फिर कहा है :—

जीभा रे ग्रा मिठेग्रा दिला रेग्रा गंबिया,—
तेरे पीछे होई बदनाम जी लोका ।

सुन्दरी कहती है ग्रो मधुर भाषी किन्तु कपटी मन वाले ! मैं तुम्हारे कारण ग्रपमानित हो चुकी हूं । इस प्रकार विरहार्ण नायिका के ग्रासुग्रों से काजल घुल गया । इतने ग्रथाह रोदन पर भी दया द्रवित नहीं हुये । हिन्दी काव्य-जगत की विरहिणी नायिका उर्मिला के समान लोक-गीत की नायिका भी ग्रपनी मनोदशा की सूचना मात्र देकर उनका ध्यानाकर्षण कर रही हैं । उन्माद-वश नायिका गुण कथन के समय भर्त्सनापूर्ण शब्दों में निंदा करती हुई नायक को कपटी मन वाला भी कह उठती है । ग्रपने सर्वस्व को त्याग कर जिसने ग्रपने माथे कलंक का टीका लगा लिया, ग्रपमानित नायिका ग्रपने एक मात्र ग्राधार नायक को यह कह कर—सूरदास के उपालम्भ—काव्य की की परिपाटी की ग्रौपचारिकता का निर्वाह करती प्रतीत होती है । मानो राधा को विस्मृत कर कुब्जा की शरण में ग्राकर ग्रब वे ग्राने का नाम तक नहीं लेते हों । इस प्रकार प्रेम में ग्रश्रुपात करते करते कठोर मन ने ममता त्याग कर उग्रता ग्रौर जड़ता धारण करके उलाहने देना प्रारम्भ कर दिया हो । ग्रन्य द्विपद ग्रौर त्रिपद लोक गीतों में भी नायक, नायिका प्रश्नोत्तरी पद्धति में शृंगार का व्याख्यान, गान करते हैं, जिनमें मिलन की ग्रभिलाषा में प्रणय की ग्रभिव्यक्ति मुखर हुई है । त्रिपदी लोक गीत इस प्रकार है:—

फुल्ल फुल्ली करी गया गासा जो,
बछोड़े म्हारे कर्मा जानी,
परमात्मा मलाग्रो ग्रासां जो ।

पर्वतीय श्रमशील जीवन में निरन्तर घर से दूर रहना ग्रौर मिल न पाना सामान्य बात है । प्रभु की इच्छा सर्वोपरि है, जब देवयोग होगा तब ही मिलना सम्भव होगा । भाग्य में बिछोह बदा है फिर क्या ? एक ग्रन्य त्रिपदी गीत में मिलन का वचन देकर बिछुड़ते नायक या नायिका के प्रणय की सांत्वना व्यक्त होती है । लोकगीत के बोल इस प्रकार हैं:—

पाणी भरना कोरी पारिएं ।
राजी रहो तेरी जिन्दड़ी ।
ग्रासां मिलणा लख बारियां ।

प्रियतमा ! नित्य नये घड़े में पानी भरते भरते तुम युग युग जीग्रो हम बार बार मिलेंगे । यहां वियोग के भार को सह्य बनाने का ग्राश्वासन दिया गया है । मन को ढाढस रहे तो प्रियतम दूर रह कर भी पास है । किन्तु यह जान कर कि शायद जीवन में मिलन हो या न हो वियोग की गुरु शिला का भार ग्रसह्य बन जाता है ।

ग्रगली त्रिपदी में एक ग्रन्य उदाहरण में नायिका के महीने गिनते निकल जाने के भाव को इस प्रकार व्यक्त किया गया है:—

नाम लिखेग्रा कोरी कापियां,
पांज महीने गइरे होये,
घरा ग्राग्रोणा छोड़े पापीया !

नायिका ने कोरी कापी पर लिखा है—पूरे पांच मास हो गए—जब से तुम गए हो। शीघ्र घर चले आग्रो। 'ओ निर्मोही उग्रतापूर्ण भत्सर्ना के स्वरों में सुन्दर गरिमा है। मानो वहां उनके प्रियत्तम को सुधि ही विसर गई हो। नायिका राधा के समान ही नायक की याद विसरने पर मन के क्रोध को पापी कह कर व्यक्त करती है। विरह में पल पल छिन-छिन दिन गिनते स्मरण करते व्य-तीत होता है। नायक को मानो याद ही नहीं है और मास पूरे पांच व्यतीत हो चुके। इसी प्रकार असंख्य द्विपदी और त्रिपदी लोक-गीतों में भावानुमुक्तकों की भाव-सम्पदा यहां के क्षेत्रीय गीतों की अक्षय निधि है। मेघदूत के यक्ष की भांति नायक को भी नायिका का स्मरण हो आता है और वह जड़-चेतन का भाव भूल कर इस प्रकार वेदना भाव व्यक्त करता है :—

हरी डालिये हिलेयां करेग्रां।
बछोड़े म्हारे कर्म जानी
फेरी सुफनेग्रां मिलेग्रां करेग्रां।

मिलन की आतुरतापूर्ण अभिलाषा लिये उस हरी टहनी के सदृश नववयस्का सुन्दरी को स्वप्नरूप में दर्शन साक्षात्कार की कामना करता है। उस डोलती हुई हरी टहनी में मानो नायक मनीषी तुलसी दास के शब्दों को:—

जिय बिन देह, नदी बिन वा।
तैसे पुरुष बिन नारी को।

स्मरण कर रहा हो। अतएव वह उसके स्वप्न रूप में साक्षात्कार की कामना में भी अपने जीवन को सार्थक समझता है। चिरकाल की विरह-वेदना में पलते नायक-नायिकाओं के मिलन का समय आ ही गया। लोक-गीत में मिलन के भाव इस प्रकार व्यक्त है :—

हरी डालिए अंगूरा बालिए,
दूरा ते पछेणी पागले, टेढ़ी सेन्धी सन्धूरा बालिए।

अब उस तरुण सुमृदुल सुन्दरी को जो चिरकाल से अपने प्रियत्तम की प्रतीक्षा में समय काट रही थी नायक मांग में सिंदूर और टेढ़ी चीर निकाले रूप में दूर से ही पहचान लेता है।

इस प्रकार मण्डी जनपद की हिमध्वल धरती, हरितिमा (हरियाली) की मनमोहक चादर ओढ़े अपने सुरीले और भाव भरे लोक-गीतों की अनन्त राशि उंडेलते प्रत्येक श्रमिक, बटोही व्यावसायिक अथवा पर्यटक को मनमोहक शीतलता प्रदान करती लोक-जीवन में हर्ष-संचार करती है। मण्डी जनपद की उत्तुङ्ग गिरिमाला—कमरू, शिकारी, तुङ्गा और नरगू की चोटियों के समान अटल एवं व्यासा के समान समवेत स्वर में फूटते इन धरती के गानों में प्रकृति अपना सम्पूर्ण सौन्दर्य अर्पित कर देती है।

—राजकीय हाई स्कूल,
टिहरा (मण्डी) हिमाचल प्रदेश।

हिमाचल का लोक नाट्य–

बांठड़ा

—वासु देव शर्मा

हिमाचल एक पहाड़ी प्रदेश होने के कारण अपनी प्राकृतिक सुन्दरता के लिये प्रसिद्ध है। इसके चारों ओर की पहाड़ियां सुन्दर वनों से ढकी हुई हैं। इन पहाड़ियों पर तरह-तरह के पेड़ उगे हुए हैं। इन में से कुछ तो ऐसे हैं जो मास छः ऋतु हरे-भरे रहते हैं। इन पहाड़ों की अधिकांश ऊंची चोटियां वर्ष भर हिमाच्छादित रहती हैं तथा इस प्रकार श्वेत लगती हैं जैसे पूर्णमाशी का चांद हो। लेकिन मैदानों में इस प्रकार की प्राकृतिक सुन्दरता बहुत कम पाई जाती है। क्योंकि वहां पर इस प्रकार के हरे-भरे जंगल तथा हिमाच्छादित पहाड़ियां नहीं के तुल्य हैं।

जैसे पहाड़ों तथा मैदानों की प्राकृतिक सुन्दरता में विभिन्नता पाई जाती है इसी रूप में वहां पर मनाये जाने वाले त्यौहार और मेलों में भी एकरूपता नहीं है। जिस प्रकार मैदानी इलाकों, मथुरा और बिन्दरावन आदि में रास-लीलाओं को प्रदर्शित करने का कार्य रास-मण्डलियां करती हैं। ठीक उसी प्रकार से हिमाचल के पहाड़ी क्षेत्रों में बांठड़े को प्रदर्शित करने का कार्य वहां पर बनी नाट्य-मण्डलियां करती हैं।

ये बांठड़े भी मेलों का ही एक रूप हैं जो केवल रात को ही मनाये जाते हैं। इनकी पृष्ठ भूमि के विषय में इस प्रकार से कहा जाता है कि ये हिमाचल के कुछ ही क्षेत्रों में बहुत समय पूर्व से प्रदर्शित किये जाते हैं। शिमला जिला के भज्जी और मंधाण आदि क्षेत्रों में, मण्डी जिला की करसोग तहसील में और सोलन जिला के बाघल आदि क्षेत्रों में ये बांठड़े प्रदर्शित किये जाते हैं। इन्हें देखने के लिये लोग अपने निजी सम्बन्धियों को आमन्त्रित करते हैं। इन्हें खेलने का कार्य वहां पर बनी कुछ स्थानीय नृत्य मण्डलियां करती हैं।

ये बांठड़े विभिन्न नामों को लेकर मनाये जाते हैं। जैसे कुछ गोवर्धन पूजा और दीवाली के नामों पर और कुछ देवठण तथा मंगरैवली आदि के नामों पर मनाए जाते हैं। यद्यपि इनके नामों में विभिन्नता है पर प्रदर्शित करने की विधि सबकी एक जैसी है। इनका आरम्भ हर वर्ष दशहरे के मेले यानी गोवर्धन पूजा के त्यौहार से होता है और ये नवम्बर मास के अन्त तक चलते रहते हैं। हमारे भज्जी क्षेत्र में इनको प्रदर्शित करने वाली मुख्य नाट्य-मण्डलियों के नाम निम्नाङ्कित हैं :—

1. शाकरा लोक-नाट्य मण्डली,।
2. शकरोड़ी लोक-नाट्य मण्डली।
3. घरैणा लोक-नाट्य मण्डली।

लेकिन हमारी स्थानीय लोक-प्रचलित भाषा में इनको दूसरे नाम यानी 'स्वांगी पार्टी' से भी पुकारा जाता है।

ये नृत्य-मण्डलियां ही अपने पास-पड़ोस के देहातों में जाकर बांठड़े को प्रदर्शित करने का कार्य करती हैं। इन बांठड़ों में विभिन्न प्रकार के स्वांगों का आयोजन किया जाता है।

बांठड़े के लिये ग्राम में एक स्थान नियत किया जाता है और उस स्थान पर बांठड़ा शुरू होने से पूर्व एक अखाड़ा बनाया जाता है। उस अखाड़े के चारों तरफ़ रस्सी लगा दी जाती है ताकि उसके अन्दर आम लोग न आ सकें। उस अखाड़े के अन्दर नृत्य मण्डली अपना कार्य करती है। बांठड़े का आरम्भ चन्द्रावली के स्वांग से होता है, जिस में सब से पूर्व भेंट का आयोजन किया जाता है, जैसे:—

भेंट—

**"किला कांगड़ा धारा जिथी मैया भवन बनाया। जो तैनो मैया ध्यावे सो फल पावे।
चरणों में ध्यान लगावे दर्शन में चले आवे।"**

इस के उपरान्त इस स्वांग में आरती तथा कृष्ण भजन आदि का आयोजन किया जाता है फिर इस स्वांग की समाप्ति हो जाती है। इसके उपरान्त बांठड़े में दूसरा स्वांग साधु का प्रदर्शित किया जाता है।

साधु का स्वांग—

साधु का स्वांग ज्ञान तथा ध्यान की बातों को मद्देनज़र रखते हुए प्रदर्शित किया जाता है।

इस स्वांग में नाट्य-मण्डली में कार्य करने वाले लोग साधु की भांति भगवें वस्त्र पहनते हैं और आपस में एक दूसरे के साथ ज्ञान आदि के श्लोक तथा भजन गाते हैं। इस स्वांग का आरम्भ इस भजन से होता है—

**"पहले गणपत पूजिए, पाछे करिये काज,
सभा बगानी बैठ के पत रखिये महाराज।"**

ये भजन अखाड़े में आने से पूर्व साधुजन परदे के पीछे से गाते हैं। इसको गाने के उपरान्त वे इधर-उधर चले जाते हैं। जब वे अखाड़े में पहुंचते हैं तो साधु की मण्डली का मुखिया गाना गाता है—

**"साधो की नगरी में बसे न कोए,
जो बसे सो साधु होए।"**

इस के उपरान्त साधु का मुखिया अपने चेले को कहता है कि आसन लाओ दातुन लाओ। फिर चेला माली को कहता है कि हे माली ! मुझे दातुन दे दो। माली चेले को कहता है--

"किस का मुना किस का मनाया,
किस कारण हमारी नगरी में आया।"

चेला उत्तर देता है --

"हरी हरी डाली कांपने लगी, कांपे गुरू की देह,
गुरू ने भेजा दातुन हमें दे।"

इसके बाद शिष्य भजन करता है—

"सखी जो आपके वन में दो सुन्दर जोगी आये हैं।
छोटे का नाम लक्ष्मण और बड़े को राम कहते हैं।
इन्हीं के संग में सीता भी, सुन्दर जोगी आए हैं।"

इसके बाद साधु की मण्डली का मुखिया उनसे पूछता है कि—अरे बाबा कोई ज्ञान-ध्यान की बातें भी जानते हो? मुखिया पहले साधु से पूछता है—

"किधर से तुम जोगी आये किधर तुम्हारा गांव, कहां से तुम चल के कहां धरोगे पांव"।

पहला साधु उत्तर देता है—

"दक्षिण से हम जोगी आये पश्चिम हमारा गांव, बिन्दरा वन से चल के आये सुनी धरेंगें पांव।"

साधु मण्डली का मुखिया दूसरे साधु से पूछता है—

"कौन तुम्हारी बहिन भानजी, कौन तुम्हारी माता ! कौन तुम्हारे संग चलेगी कौन करें दो बाता?"

दूसरा साधु उत्तर देता है—

"दया हमारी बहिन भानजी धरती हमारी माता। लिया दिया सब संग चलेगा धर्म करें दो बाता।"

साधु मण्डली का मुखिया तीसरे साधु से पूछता है—

"कौन तपस्वी तप करें, कौन नित उठ नहाये। कौन इस रस को उगले कौन इस रस को खाये?"

तीसरा साधु उत्तर देता है—

> "सब तपस्वी तप करे ब्रह्मा नित उठ नहाये । इन्द्र इन सब को उगले धरती सब कुछ खाये ।"

सब से बाद में साधु मण्डली का मुखिया कुछ श्लोक करता है—

> "ग्रासन बिन्दा ग्रासन विन्दा, ग्रासन बैठे गुरू गोबिन्दा जो जाने ग्रासन की बात ।"

> "घर घर लीड़र घर घर लीड़र दल, डूबी नाव उस देश की ग्राज नहीं तो कल ।"

> "कपिला गौब धोबी घरे, ब्राह्मणा बकरी चारे, ऊंच की करनी नीच करें, कौली वेद सुनावे, पुत्र पुत्री बठे चबारे ग्रौर बूढ़ा हल चलावे, माता पिता का कहना न माने भौंक भौंक मर जावे ।"

> "ऊंट को झोलणा, भेड़ी को सुतणा, बन्दर के गले मोती पहनावे ग्रौर भैंस के ग्रागे मरदंग बजावे, ऊलू के पास कवित सुनावे गराटा काये किन्दरा ग्रौर भैंस के पास मरदंग किस काम का है !"

ग्रन्त में साधु मण्डली का मुखिया पूछता है कि–ग्ररे बाबा ! तुम लोग कोई भजन बाणी भी जानते हो ? तो साधुजन कहते हैं—ग्ररे क्यों नहीं ? इसके बाद भजन गाते हैं—

> "मन लगेया मेरा बे फकीरी में, मन लगेया मेरा बे फकीरी में । जो सुख पाया राम भजन में सो सुख पाया फकीरी में। हाये मन लगेया मेरी बे फ़कीरी में ।"

इस भजन के साथ साधु का स्वांग समाप्त हो जाता है।

साधु के स्वांग के बाद गारड़ के स्वांग का ग्रायोजन किया जाता है।

गारड़ का स्वांग—

इस स्वांग की कहानी इस प्रकार से है कि सरकार के वन विभाग की ग्रोर से ठियोग के किसी जंगल में घास-लकड़ी काटना बन्द था। इस जंगल की देख-भाल के लिये एक गार्ड की नियुक्ति की गई थी। एक दिन क्या हुग्रा कि उस जंगल के ग्रास-पास पड़ने वाले गांव की एक स्त्री उस बन्द जंगल में घास काटने चली गई ग्रौर उसे गार्ड ने पकड़ लिया। जब गार्ड उसकी रिपोर्ट लिखने ग्राया तो वह ग्रपना नाम न बताये तथा गाना करती है :–

> "पांच मांगे दस रे बे देणे हो गारड़ा देखे तू मेरी रिपोट कर दा हो ।।"

इस पर गार्ड उसको छोड़ देता है और उसकी रिपोर्ट नहीं करता है, परन्तु उसके बाद वह स्त्री फिर उस बन्द जंगल में बकरियों को चुगाने के लिए ले जाती है और गार्ड फिर पकड़ लेता है। जब वह अपना नाम नहीं बतलाती तो गार्ड उसको पुलिस वालों के हवाले कर देता है। तब उसका मुकदमा अदालत में चलता है और दोनों पक्ष वकील देते हैं। उस मुकदमें में वह स्त्री हार जाती है और इसको सजा हो जाती है। इस स्वांग में नृत्य मण्डली में से ही इस में स्त्री-पात्र का कार्य करते हैं।

इस के बाद गाना गाती है—

"पशु गारड़ा गवर्नमेंटा रे हाकमा ताले शाबाश हो। सौ सौ बारी मैं तुझो बोलया रे गारड़ा जंगला रा वे देखणा हो।"

गार्ड उत्तर देता है—

"जगलां रा गम बी ना तू करेया सजना हां ऐस जंगला रा राजा हो।"

इस गाने के साथ गार्ड का स्वांग समाप्त हो जाता है।

कांचणी का स्वांग——

इस के उपरान्त कांचणी के स्वांग का आरम्भ होता है। इस स्वांग में लोक-नृत्य होते हैं। इस में नृत्य-मण्डली में से ही कुछ लोग स्त्री के वस्त्र पहन कर नृत्य करते हैं और पहाड़ी तथा फिल्मी गाने गाते हैं। बांठड़े में आये कुछ लोग अपनी इच्छानुसार इनको पैसे देते हैं जिसको वे इस प्रकार बेल के रूप में गाते हैं।

"जै जै जननी ज्वाला मुखी और खूब रचायो खेल, एक रुपैया श्री मोहन लाल जी हमारी नृत्य मण्डली को दियो है, इनकी बढ़ायो बेल॥"

लोगों की फरमायश पर पहाड़ी गाने भी गाये जाते हैं, जैसे—

"शुकरू मेटा नाटे"—

"हो पार बोलो ढाका का रीड़वा तेरे तोल पूजे तुणी रैं वे नाले। नाले स्वामीयां शुकरू मेटा तोल पूजे तुणी रैं बे नालें। हो दाचे वी राशे तेरे मिटीयै गवे घाटु फशा सरूई रैं डाले।
डालैं स्वामीया
शुकरू मेटा घाटु, फशा सरूई रैं डाले। हो
हाड़ा मांसां रैं देरकू लागे खूना रै बगदैं नालैं
नालैं स्वामीयां शुकरू मेटा, खूना रे
बगदैं नाले। होरी बोलै माणुएं झीमरा
लुणा बुबी बोले बेबी लुंणो घासा। हो आगड़े
बोलैं म्हारे पोलीसो चालो पिछैं लेई बुबी
री लाशा। लाशा स्वामीया शुकरू मेटा, पिछैं

लंई बुदी रे लाशा। सकी बोलो शाशुवै
खड़ो कै भेजे सकी दिता बैणे ये धाका।
धाका बोलो स्वामियां शुकरू मेटा सकी बोलो
दिता बैणे ये धाका।"

सब से अन्त में बांठड़े में रांझू तथा फूलमू के स्वांग को प्रदर्शित किया जाता है। इस स्वांग में नृत्य-मण्डली में से निम्न पात्र कार्य करते हैं:—

1. रघुवीर सिंह ठाकुर।
2. रांझू–रघुवीर सिंह ठाकुर का लड़का।
3. नानकू-ठाकुर साहब का नौकर।
4. फूल्मू—जुलाहा की लड़की।

ठाकुर पूछता है—'रांझू अभी तक कहां थे?' "महाराज सामने की पहाड़ी पर भ्रमण कर रहा था"। "भ्रमण कर रहे थे या फूलों पर झूल रहे थे? नादान लड़के मेरी दी हुई आजादी का अनुचित लाभ उठा रहे हो? एक खान-दान की लड़की से तो खान-दान की इज्जत विरान कर रहे हो। यदि आज के उपरान्त उस लड़की के साथ देखूंगा तो लोहे के पिंजरे में बन्द कर दूंगा"।

रांझू कहता है कि—जो मैं बचन दे चुका हूं मुझे उसे निभाना पड़ेगा। रघुवीर सिंह कहता है बेटा–अगर आग पर कूदना चाहतें हैं तो माता-पिता कभी नहीं कूदने देंगे। इसके उपरान्त रांझू गाना गाता है—

"नीली नील फटीअन भेड़े चरांदियो हो बलिये काजु जो तरसान्दी छुड़ेयां दा दिल हो, बलिये। हाथे तेरे दाच्ची, लक्के तेरे गाची हो, बलिये। दाच्ची रैया भाने मिली कै जायां फूलमू।"

फूलमू रांझू को कहती है कि—दूर हटो तुम्हें शर्म नहीं आई, परायी लड़कियों से छेड़-छाड़ करते हो। रांझू—'हां शर्म तो उसे आये जो तुम्हें पराया समझे यहां तो एक मन में तन वाली बात है। सच कहता हूं फुलमू इस धरती के कण-कण में वृक्षों के पत्ते-पत्ते में तुम्हारी ही शक्ल नजर आती है। जी चाहता है कि तुम्हें हर-दम देखता रहूं।'

फूल्मू कहती है—बहुत बातें बनाना सीख गये हो। रांझू इस देहात की अनपढ़ लड़कियां तुम्हारी बातें कैसे समझें?

रांझू कहता है—समझना तो असम्भव है। प्रेम एक ऐसी धड़कन होती है जो बातों से समझी नहीं जाती है। जिसे कहते हैं आंखों की "जबान"।

फूलमू—जाओ-जाओ तुम आये क्यों हो! 'आया नहीं, अपितु तुम्हारे गाने की सुरीली आवाज मुझे खींच कर लाई है। अत्यन्त कठोर न बनो फूलमू! मैं सच तुम से प्यार करता हूं।'

फूलमू--प्रेम करना तो सब जानते हैं। किन्तु निभाने वाले बहुत कम होते हैं। पुरुषों को तो अधिक प्रेम करना आता है। स्त्रियां दु:खिया होती हैं। ठाकुर साहब नजर नहीं आता है।

रांझू--यदि तुम्हें मेरे प्रेम पर विश्वास नहीं है तो अपने हाथों से मेरा गला घोंट कर इस टीले के नीचे नाले में लटका दो। मेरे हर सांस से तुम्हारा नाम निकलेगा।

फूलमू—सच कहते हो। वायदा करते हो, धोखा तो न दोगे। रांझू कहता है कि—जब तक सूरज, चांद और सितारे साथ देंगे तब तक मैं तुम्हारा ही रहूंगा। रांझू गाना गाता है–

हमें तो लूट लिया मिलके हुस्न वालों ने गोरे गोरे गालों ने, काले काले बालों नें। नजरों में शो किया बचपना शरारत में अदा, हम देख के लुट गये शराफत। में हम तो अपनी जान से जायेंगे किसी की उलफत में। यकीन है कि वो न आयेंगी किसी की हिम्मत में। खुदा सवाल करेगा तो क्या, लुट गये हम शराफत में।"

फिर उसके बाद जंगल में चले जाते हैं। (ठाकुर रघुवीर सिंह जाता है।) 'घबरा मत बेटी मैं रघुवीर सिंह हूं तुम्हारी आजादी में अड़चन डालने आया हूं। तुम चीटी होकर हाथी की सवारी करना चाहती हो। आज के उपरान्त तुम्हें रांझू नहीं मिलेगा, रांझू का विवाह आ गया है।

फूलमू कहती है– ठाकुर साहब, घाव पर नमक न छिड़कियेगा, चली जाती है।

रांझू आता है। लड़की कहती है–रांझू, आपके पिता ने मुझे बहुत डांटा है। 'अच्छा मैं अभी जाकर पूछता हूं कि क्यों कहा उन्होंने कि आज के बाद रांझू नहीं मिलेगा उसकी शादी आ गई है।'

रांझू कहता है– इधर कुआं उधर खाई, चक्की के दोनों पाटों में कैसे दानों की तरह मजबूर हूं। जो फिर बिखर जाते हैं।

शादी का आरम्भ होता है। तथा तेल-तोरन होता है।

रांझू गाना गाता है—

"बारूवे सगारूवे काजो झांकदी बलिये, काहजो झांकदी। वो हत्थ बोटणे दे लायां फूलमू मेरा ब्याह लगेया।"

फूलम -- कुंणिये पुरोहिते तेरा ब्याह लिखेया, कुणियें कित्ती कड़माई।"
रांझू -- कुलौ रे पुरोहितें मेरा ब्याह लिखया बापु वें किती कड़माई।"
फूलमू -- जुणी पुरोहिते तेरा ब्याह लिखेया होई रांझू तेसरी पुरी न हूंणी। रांझू गलां होई बितियां,। पांच वे रुपेइयें हाथों रा रूमाल ये ही गरीबा रा मोल रांझू, गलां होई बितियां।"

इस गाने के बाद फुलमू चली जाती हैं।

इसके बाद रांझू की बारात तैयार होती है। फूलमू के साथ की लड़कियां कहती हैं— फूलमू क्यों गम करती है? इसके बाद वह विषैली चीज खाकर मर जाती है।

एक तरफ से रांझू की बारात और दूसरी ओर से फूलमू की लाश आती हैं। रांझू एक गद्दी से पूछता है कि यह किस की लाश आ रही हैं। गद्दी कहता है कि यह तो फूलमू की लाश आ रही है। फूलमू किसी के वियोग में विष खाकर मर गई है। रांझू पालकी उठाने वालों के लिये कहता है 'जरा रोको, और गाना गाता हैं—

"रोको कहारो मेरी पालकी। पारी पारी फूलमू वारी वारी। रांझूआ रांझू आ नीचे गादणी रा डेरा हो। डेरे रा बे गम न तू करी रांझू आ ऐते जंगल बतेरा हो। दाली रं चौलडु, लोईया री खिचड़ी, फूलमू सीलो गलां होई बींतियां।

पालकी से उतरने के उपरान्त रांझू फूलमू की अर्थी बनाता है। फिर कहता है (जब उसके चारों ओर आग लगाते हैं) आग की लपटो! तुम जिस बेदर्दी से फूलमू के कोमल शरीर को जला रही हो, शायद तुम नहीं जानती, जब वह ज़िन्दा थी तो मेरे कारण इससे भी ज्यादा जलती थी। फुलमू! दूल्हा रांझू अपने मेहन्दी लगे हाथों तुम्हें विदा कर रहा हूं। जाओ तुम इससे पार जाओ मैं भी आता हूं। इसके साथ इस स्वांग तथा बांठड़े की समाप्ति हो जाती है।

—उद्यान विभाग, हिमाचल प्रदेश,
नव बहार, शिमला–2

सांस्कृतिक विसरण और समन्वय

—हरिचन्द पराशर

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात पुनर्निर्माण की बेला में सांस्कृतिक धरातल पर तुरन्त दो परस्पर-संघर्ष-समस्याएं उभरीं। एक, भारत की पुरातन कलासिकल संस्कृति के तत्वों में से कौन से तत्व उपयोगी और समयोचित समझकर अपनाए जाएं; दूसरी, भारत की लोकसंस्कृति के किन-किन तत्वों को उभारा जाए और किन-किन को उपेक्षित कर दिया जाए। सांस्कृतिक धरातल पर इस प्रकार की उधेड़बुन के प्रसंग में प्रविधिज्ञ जीवन शैली (टैक्नोक्रेटिक स्टायल आव् लायफ) का अस्तित्व निखर आया। चूंकि प्रविधिज्ञ जीवन शैली एक प्रकार से आधुनिकीकरण का परिणाम थी, अतः उस का प्रचलन अधिक हो रहा है। 'क्लासिकल' और 'लोक' दोनों पश्चगमन की अवस्था में हैं। प्रविधिज्ञ संस्कृति एवं संचार—सम्प्रेषण से उत्तेजित इच्छाओं—आकांक्षाओं का प्रवाह द्रुतगामी है। इसका संक्षिप्त विश्लेषण प्रस्तुत है।

प्रविधिज्ञ संस्कृति (टैक्नोक्रेटिक कल्चर)

सांस्कृतिक धरातल पर राष्ट्रीय विकास के लिए केवल उत्साह का चमत्कार पर्याप्त नहीं, अपितु अध्यवसायपूर्वक लगातार आयास भी आवश्यक है। ऐसे प्रयास के लिए कार्य-निष्पादन के प्रतिमानों के साथ सम्बद्धता आवश्यक होती है। अतः यह आयास जनोत्तेजन से सर्जित नहीं होता। बौद्धिकों का सन्धान-समूह इसमें सहायक होता है। इसीसे जनोत्तेजन की करिशमयी सतरंगी मध्यम पड़ती है। इस सन्धान-समूह की तथ्यात्मक इतिवृत्तात्मकता ऐसी आधात्री है जो जनोत्तेजन के संक्षोभ और प्रघात को चूस लेती है। फलतः उसकी गूंज मध्यम हो जाती है। जनोत्तेजकों के बरामदा नौकर और उसकी चिन्तना के निकट के अन्य सार्थक व्यक्ति सन्धानसमूह के परहेज़ी स्वभाव से प्रभावित होते रहते हैं। इस सन्धान-समूह में मैडिक्ल डाक्टर, इंजीनीयर, अध्यापक, उच्चतर सिविल अधिकारी, पत्रकार, लेखक, सम्पादक, प्रसारक, व्याख्याता, अनुसन्धाता आदि सम्मिलित हैं। राज्यसत्ता की नीतियों को तथ्यपरक इतिवृत्तात्मकता से परखना इस सन्धानसमूह का मुख्य लक्षण है। सन्धान-समूह में व्यक्तियों की संख्या अपेक्षाकृत कम होती है और उन में भी एक स्थायी दूरी बनी रहती है। व्यावसायिक विशेषीकरण से, अलग-अलग पानगोष्ठी से, अलग समारोही तबीयतदारी आदि कारणों से वे एक दूसरे के निकट आकर सांझी समुदाय नहीं बना पाते। अतः यह समूह न तो आत्मनिर्भर है और न ही उसकी सम्पत्ति पर्याप्त रूपेण संस्थापित ही है। यही कारण है कि यह संधान-समूह न तो राजनीतिज्ञों द्वारा महसूसा जाता है और न ही नेतृत्व के निचले सोपानों में अनुकरणीय हो पाता है और न ही यह समूह युवावर्ग में महत्व बना पाता है। व्यावसायिक व्यक्तियों के शिथिल बन्धन इस समुदाय की एक विशेषता अवश्य

है। इसके व्यक्ति एक दूसरे की भूमिका और दक्षता के लिए पारस्परिक आदर रखते हैं। इतिवृत्तात्मक और परिश्रमी ये व्यावसायिक व्यक्ति आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए अत्यन्त उपयोगी और लाभदायक होते हैं। प्रविधिज्ञ संस्कृति के उन्नायक ये व्यावसायिक व्यक्ति ही हैं। प्रविधिज्ञ विशेषीकरण का एकीकरण तो नहीं किया जा सकता परन्तु प्रविधिज्ञों का एक वर्ग अवश्य बन रहा है। आधुनिक संस्कृति का कोई न कोई खण्ड प्रत्येक प्रविधिज्ञ के पास है, अतः उस वर्ग में प्रविधिज्ञ संस्कृति का विकास होने लगा है। परन्तु यह संस्कृति समारोही वस्तुओं के आसपास ही घूमती है, जैसे रहने सहने का स्तर, सहचरों का उत्कर्ष और प्रतिष्ठा, व्यावसायिक प्रसिद्धि, प्रवीणता का आदर, परिश्रमी स्वभाव का सत्कार, व्यावसायिक निष्ठा–विभूति का आकर्षण, राजनीति से कुछ दूर रहने का झुकाव, वर्गदम्भ, जनोत्तेजन से कातरता और घबराहट इस संधान–समूह की कुछ स्पष्ट विशेषताएं हैं।

नव-जागरण का साहित्य

नवजागरण का साहित्य आधुनिकता की उपज है। आधुनिकता वह दृष्टि है जिससे हम मानव के महनीय मूल्यों को नए संदर्भों में देखते हैं।

सांस्कृतिक धरातल पर आधुनिकीकरण के लिए सर्जनात्मक लेखक का प्रचुर महत्त्व है। साहित्यिक जागरण आधुनिकीकरण का अग्रदूत बन कर आया करता है। साहित्य की नवीन विधा उपन्यास केवल मात्र सम्प्रेषण की आधुनिक विधा मात्र नहीं है अपितु सांस्कृतिक समाजों में जनता को आधुनिक जीवन की समझ का वितरण करने के लिए उपन्यास एक प्रभावी कारक माना जाता रहा है।

सामाजिक आधुनिकीकरण और राष्ट्रीय एकता के लिए भाषा का महत्त्व सर्वसम्मत है। आधुनिकीकरण के साथ नए सिद्धान्तों का आगमन अनिवार्य है और उन की अभिव्यक्ति के लिए नई भाषा आवश्यक है। वह भाषा समूचे राष्ट्र के साथ भी सम्बद्ध रहे, ऐसा भी आवश्यक है। बाहरी दुनिया के प्रति जागरूकता और नई राष्ट्रीय आत्म-चेतना के विकास के साथ साथ पत्रकारिता और उसके लिए जनोपयोगी भाषा की आवश्यकता पड़ती है। भारत के जागरणकाल में प्रत्येक महान नेता के रचनात्मक, कार्यक्रमों में किसी पत्रिका का सम्पादन कार्य भी सम्मिलित था।

सांक्रान्तिक काल का लेखक अपने समय की बौद्धिक सन्तति का सदस्य होता है। इस नाते उसने जनता को आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में लगाना होता है। अतः उसे नई भाषा की आवश्यकता होती है। भाषा के प्रसंग में राजनीति, साहित्य, पत्रकारिता और संचार-सम्प्रेषण एक स्थान पर एकत्र हो जाते हैं। लेखक भी जनता को प्रकाश देना अपना कर्तव्य मानता है और इस दृष्टि से वह राजनीतिज्ञ और पत्रकार से अभिन्न हो जाता है। कविगुरू रवीन्द्रनाथ ठाकुर के लिए कहा जाता है कि वह सुपर-पत्रकार थे। उन्होंने अपने समय के छोटे बड़े सभी प्रश्नों पर पूरी टीका और विस्तृत व्याख्या की है। उनकी भाषा सम्पन्न और मार्मिक थी।

साहित्यिक आन्दोलन का अभिप्राय केवलमात्र साहित्यिक विधा के परिवर्तन से नहीं है अपितु राष्ट्रीय देश-भाषा का विकास भी है। देशी भाषा को साहित्यिक स्तर प्रदान करने का अभिप्राय है—देशी जनता के भावों का उत्थान करना। राजतन्त्र में प्रजा का हिस्सा मानने वाले सदैव प्रजा की भाषा का उत्थान चाहेंगे और अभिजात्यवादी क्लासिकल भाषा के समर्थक बने रहेंगे। नया साहित्य परम्परा के विरुद्ध हथियार भी है और नए भविष्य का संकेत भी तथा नए विचार का व्याख्याता भी। ऐसे नए साहित्य के लिए जन-भाषा का नए सिरे से उत्थान होता है क्योंकि क्लासिकल भाषा पुरातनपंथी विचार धारा की धात्री बनी रह जाती है।

संचार-सम्प्रेषण

संचार और सम्प्रेषण के विस्तार ने पारस्परिक समुदायों का पतन किया और यही आधुनिकीकरण में सहायक होंगे। इनमें प्रेस, पत्रकारिता, रेडियो और लोक कलाएं सम्मिलित हैं। सूचना-प्रवाह और सन्देश-नियन्त्रण सदैव प्रशासन और औद्योगिक फर्मों के फैसलों को प्रभावित करते रहे हैं। अतः प्रविधिज्ञ संस्कृति में उनका योग-दान होना है।

सामाजिक प्रक्रिया के विकास में संचार और सम्प्रेषण का महत्व सर्वाधिक है। निरुद्देश्य और निष्प्रयोजन अनेक क्रियाएं सम्प्रेषण-कला द्वारा सार्थक सम्बन्धों में स्थापित की जाती हैं। उच्चस्थ व्यक्तियों के साधारण कार्यों को विशालकाय बना कर प्रस्तुत करना भी संचार-सम्प्रेषण का ही कार्य है। मानवाकार कार्यों को समाजाकार कार्यों का रूप दे कर प्रस्तुत और स्थापित करना और राष्ट्राकार सत्ता का आभास उत्पन्न करना संचार-सम्प्रेषण के संगठन का ही करिश्मा है। यह संगठन ज्ञान और सूचना का एक सांझी फण्ड एकत्र करता है, उसी के सहारे जागरूक व्यक्ति सामूहिक विचार चर्चा कर सकने में समर्थ होते हैं।

परम्परा एक ऐसा अतीत है जो निरन्तर बदलता, निखरता और छंटता रहता है। इसके विपरीत आधुनिकता एक प्रकार से अन्योन्य-क्रियाशील आचरण-प्रणाली है। इसके लिए कुण्ठा के स्थान पर सहभागिता को स्थापित करना आवश्यक है, क्योंकि कुण्ठा से आक्रमण और पश्चगमन उत्पन्न होते हैं। इन से उदासीनता, भावशून्यता और पदत्याग वाली भावनाएं उपजती हैं जो समाज की सर्जनशीलता को चाट जाती हैं। समाज के रचनात्मक कार्य के लिए सहयोग, सहभागिता और हिस्सेदारी अपेक्षित रहती है। इस के लिए तदनुभूति की क्षमता का विकास करना होता है। जो व्यक्ति समाज के जितने बड़े घेरे में कार्य करता है उसे उतनी बड़ी तदनुभूति-क्षमता दरकार होती है। इसी क्षमता के अनुसार व्यक्ति में परोक्ष अनुभवों से शिष्ट, शिक्षित और विद्वान एवं जानकार बनने की क्षमता का विकास होता है। किताबें पढ़कर, समाचार सुन कर रेडियो के रूपकों का श्रवण करके जो अनुभव आत्मसात होते हैं वे परोक्ष अनुभव कहलाते हैं। ऐसे अनुभवों का साक्षात्कार व्यक्ति अपनी तदनुभूतिक्षमता के अनुसार करता है। इस क्षमता को बढ़ाने का कार्य पत्रकार, प्रसारक, लेखक और राजनीतिज्ञ अपने अपने ढंग के जन-प्रबोधन के द्वारा सम्पन्न करते हैं। ऐसे जन-प्रबोधक से सिविल संस्कृति का विकास होता

है जो कि प्रविधिज्ञ संस्कृति से भिन्न होती है और पारम्परिक ढंग की लोक-संस्कृति से भी अलग। सांस्कृतिक धरातल पर लोक-संस्कृति, सिविल-संस्कृति और प्रविधिज्ञ-संस्कृति तीनों के समन्वय की आवश्यकता है।

आज के मानव का सांस्कृतिक संकट, इच्छाओं और प्राप्तियों के बीच विशाल और भयंकर अन्तराल है। 'मास मीडिया' इच्छाओं को विशालकाय बना रहा है, भौतिक पदार्थों की प्रगति का क्रम उतना द्रुत नहीं है और न ही हो सकता है। अतः इच्छाओं और प्राप्तियों के बीच एक सह्य सन्तुलन स्थापित होना मानव कल्याण के लिए आवश्यक है। लेखक, पत्रकार, प्रसारक, राजनीतिज्ञ को इस दिशा में सचेष्ट होना है। समाज में मानसिक गतिशीलता, राजनीतिक स्थैर्य, और सामाजिक सन्तुलन अपेक्षित है। तोषणीय और तर्पणीय प्रत्याशाओं को जाग्रत किए बिना मानवों की प्राणशक्तियों को गतिशील बनाना 'मासमीडिया' का करणीय कर्म है। नई रुचियों और नए हितों को यौक्तिक ढंग से मुखर करना सम्प्रेषक और प्रसारक का कार्य है। प्रजातन्त्र में निजी हितों और निजी रुचियों का यौक्तिक योगफल सार्वजनिक संस्थाओं के रूप में उभरता है। अतः सांक्रान्तिक युग के ज्ञान और कर्म के मानवों को यह दक्षता प्राप्त करनी है जिस से वे नई उद्‌भावनाओं, नए मानवों, नई स्थितियों और नई रुचियों का भली प्रकार निगमीकरण और समावेशन कर सकें।

अतः आज के समाज में परम आवश्यकता इस बात की है कि आधुनिकीकरण की दक्षता वाले बौद्धिकों की गुणयोग्यता की आवश्यकता, और लोकगत शमूलियत की भावना की आवश्यकता में एक स्वस्थ संतुलन पैदा किया जाए। कुछ सीमा तक संचार-सम्प्रेषण द्वारा यह संतुलन स्थापित किया जाता है, क्योंकि इसमें बौद्धिकों की तटस्थता और जनोजत्तेजन की इच्छा दोनों का अध्ययन किया जाता है। लोकगत सत्ता का क्रमबद्ध उद्देश्य राष्ट्रीयता का निर्माण है। आज के वैज्ञानिक युग में प्रत्येक राष्ट्र के कुछ सार्वत्रिक प्रतिमान भी हैं और राष्ट्रीय अभिज्ञान के कुछ एक विशिष्ट गुण भी हैं। इन दोनों में कुछ संघर्ष अनिवार्य है। सारे विश्व में आधुनिक जीवन के सभी पक्षो में विसरण हो रहा है और साथ ही प्रत्येक प्रादेशिक संस्कृति अपनी अद्वितीय पहचान को पुनर्स्थापित भी कर रही है। सांस्कृतिक विसरण तथा जीवन के पुराने प्रतिरूपों को आधुनिक आवश्यकताओं के अनुरूप समंजित, अनुकूलित और रूपायित करने की समस्या वस्तुतः एक सांस्कृतिक संकट है। विश्व-संस्कृति वैज्ञानिक और यौक्तिक दृष्टिकोण पर आधारित है। प्रविधि की उच्चतर स्तरों की प्रयुक्ति उभर रहे विश्वमानव की विशेषता है। विश्वमानव मानवीय सम्बन्धों में पारलौकिक पावनता के स्थान पर इहलौकिक शुद्धता स्थापित करना चाहता है। वह ज्ञान के प्रबोधक मूल्यों को औपचारिक स्वीकृति देता है तथा राजनीतिक क्रियाओं में लोकगतम शमूलियत के प्रोत्साहन को आदर देता है।

ऐसी सांक्रांतिक स्थिति में संचार–सम्प्रेषण का यह दायित्व बन जाता है कि वह समाज को रूप और अर्थ दे जिससे वह अपने अभिज्ञान को रक्षित और विकसित करने में क्षमता और दक्षता प्राप्त कर सके। सार्वदेशीयता और प्रान्तीयता की मांगों को समंजित

होना है। जनता आधुनिक विश्व के सार्वत्रिक प्रतिमानों में और समाज के विशिष्ट तत्वों के खास हितों में सन्तोषी सन्तुलन चाहती है। इसी सन्तुलन के गर्भ से विकास-प्रक्रिया जन्मती है और उस प्रक्रिया की अनिवार्य मांग सदैव यह रहती है कि विचरण की चोटियां अतियों के भीतर ही रखी जाएं। विकास के लिए कुछ सीमा तक तो तनाव आवश्यक है, क्योंकि इससे अनुकूली परिवर्तन का वातावरण बनता है और जागरूकता बनी रहती है, परन्तु तनाव की अतियां हानिकारक संचार-सम्प्रेषण का यह स्वभाव है कि वह किसी विशेष राजनीतिक दर्शन का सेवक बन कर कार्यरत नहीं होता है। पारम्परिक ढंग का संचार अपनी आंख अतीत पर रखता है जबकि आधुनिक ढंग का संचार अपनी दृष्टि भविष्य पर टिकाता है। भविष्य पर दृष्टि रखने से भविष्य के निर्माण पर नियन्त्रण प्राप्त होता है।

आधुनिकीकरण की प्रक्रिया की मांग यह है कि जीवन के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष के उद्देश्यों के प्रति वर्धनशील-स्वानुशासन की भावना और विस्तरणशील प्रतिबद्धता की भावना कार्यान्वित की जाए ताकि प्रारम्भी राजनीतिक समुदाय यथाशीघ्र सिविल समाज के रूप म रूपान्तरित हो जाय। जनोत्तेजकों और बौद्धिक सन्धानसमूह में सन्तोषी सन्तुलन से ही विस्तरणशील प्रतिबद्धता सम्भव हो सकती है । वर्तमान सास्कृतिक संकट के सौख्य के लिए यह आवश्यक है। यह सन्तुलन लोक-संस्कृति, नगर-संस्कृति, अभिजात्य संस्कृति और प्रविधिज्ञ संस्कृति चारों क्षेत्रों में वांच्छित और अपेक्षित है।

हिमाचल प्रदेश में विभिन्न साँस्कृतिक जनपद हैं। उन में सांस्कृतिक धरातल पर तीन विचार-प्रक्रियाएं चल रही हैं। एक, अपनी स्थानीय जीवन शैली को सुरक्षित और जीवन्त रखने की चेष्टा; दो, हिन्दी समीकरण और वैंष्णव मार्ग के प्रसार में हिन्दीकरण की प्रवृत्ति; तीन, आधुनिकता के नाम पर सामाजिक सामन्तवाद का विकास।

मूल्यों, प्रतीकों और मिथकों का सम्पुट सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य का निर्माण करता है। इस परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि परिष्कार और परिमार्जन की ओर अधिक ध्यान दिया जाए अथवा जनार्दन में प्रोत्साहन को प्रमुख स्थान दिया जाए। विद्वानों और अनुसन्धाताओं के शोध के लिए माडेल का काम देने के लिए ट्रायबल संस्कृति को ज्यों का त्यों रहने दिया जाए, अथवा आधुनिक विज्ञान और टैक्नौलोजी की सुविधाएं जुटा कर उनका आर्थिक विकास करके उन्हें आधुनिक नगरीय जीवन की आधुनिकता प्रदान की जाए। इस प्रसंग में नगर और ग्राम दोनों के सापेक्ष महत्त्व को आंकना होगा। नगर और ग्राम दोनों ही बढ़ती हुई जीवन-शैली के केन्द्र हैं। आधुनिक संस्कृति के विकास में प्रमुख द्वन्द्व हैं, परिष्कार और लोकप्रियता में, बौद्धिकता और जनोत्तेजन में, तथा ग्राम्य लोक संस्कृति और नगरीय लोक संस्कृति में। आज के चिन्तन में एक दुचिती और दुविधा है, पारम्परिक तौर तरीकों को खत्म होने देना भी खतरनाक है और उनकी परीक्षा भी स्वास्थ्य-वर्धक नहीं। ग्राम्यजन आधुनिक विज्ञान और टैक्नौलोजी की सहायता से अपनी प्रगति और विकास चाहते हैं, प्राचीन निष्प्राण परम्पराओं को अपनी छाती के साथ लगाए रखना उन्हें पसन्द नहीं है। ऐसी स्थिति में दो रास्ते हैं, प्रथम नगरीय कला-शिष्टों को ग्राम्य-लोक-कलाओं में शिष्ट किया जाए, द्वितीय, ग्राम में ग्राम्यलोक

कलाओं के अतिरिक्त नगरीय लोक कलाओं एवं नगरीय आधुनिक कलाओं का विकास हो। हम अपनी जातीय अभिवृत्ति तथा झुकाव के कारण समक्ष और संगत प्रश्नों की ओर पीठ किए रहते हैं और असंगत गहराइयों उंचाइयों में विचरते हैं। कला और संस्कृति का निर्माण सरकार तो कर नहीं सकती, सरकार से तो केवल इतनी उपेक्षा है कि वह ऐसा परिवेश बनाए जिसमें कला–संस्कृति के पौधे का विकास हो सके। सामान्य अवलोकन है कि ग्रामीण तो अपने तौर–तरीके जीवन शैली के ढंग शहरों जैसे बना रहे हैं। राष्ट्रीय ही नहीं, वे तो अन्तर्राष्ट्रीय समीकरण की लपेट में हैं।

ग्राम्य भारत न तो बूढ़ी परम्परा के नीचे दब सकता है और न ही उपभोक्ता समाज के तेज़ बहते पानियों में डूब सकता है। उसे "ग्राम नगर" का नैरन्तय पसन्द है।

हमारी परम्परा केवल मृण्मय रूढ़ियों का पुंज मात्र न बन जाये, इसके लिए परम्परा को नित नया बनाये रखने के लिए सामूहिक सर्जनशीलता को उत्साह आवश्यक है।

सांस्कृतिक जागरण का लक्ष्य ही होना चाहिये—सामूहिक सर्जनशीलता। जनता की सोई हुई सर्जनशीलता को जागृत करने और स्वतन्त्रता को क्रियाशील बनाना। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये ग्रामों में रहने वाली ग्रामीण जनता विशेषतया अनुसूचित कबीलों की पारम्परिक कलाओं की संरक्षा करनी चाहिये। ग्रामीण जनता का यह स्वभाव है कि वे अपनी प्रतिष्ठा, और गौरव की खातिर बड़ी से बड़ी आर्थिक हानि उठा सकती है। उनकी इस गौरवमयी प्रतिष्ठा की भावना की संरक्षा होनी चाहिये। इसमें व्यक्ति मानव के स्थान पर समष्टि मानव का प्राधान्य है।

श्रमशील मानवों की अलिखित रचना ही "लोक गाथा" है। लोकगाथा में सर्वाधिक सम्पन्न, स्पष्ट और कलात्मक दृष्टि से प्रभावी नायकों की सृष्टि हुई है। ग्रामीणों की युक्ति और प्रतिभा एवं विचार और भावना का समन्वय 'लोक गाथा' में सम्भव है। आशा और आस्था के सन्देश से परिपूर्ण जीवन और जगत के प्रति भौतिक दृष्टिकोण के आधार पर सामूहिक भावना और अद्वितीय व्यवहार से सम्पन्न, तथा भव्य सौन्दर्य और सहज सारल्य से परिपूर्ण 'लोकगाथा' लोक-संस्कृति का सागर है। इस का मंथन करके अमृत निकालने से पूर्व विषपान के लिये 'शिव' चाहिये।

लोक गाथा में परम्परा का प्रभाव और परम्परा के प्रभाव से उत्पन्न तलछट दोनों होते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि परम्परा का तो आदर किया जाए और तलछट से लगाव न रखा जाए। परम्परा सिखाती है कि जीवन की मामूली वस्तुओं में प्रवेश किया जाये, उन्हीं से आनन्द और प्रसन्नता की भावना निकाली जाए। छोटे व्यक्तियों और छोटी वस्तुओं को हित में रखना लोकगाथा की शिक्षा है। "चलत्येकेन पादेन तिष्ठत्ये एकेन बुद्धिमान" के अनुसार विकास को आधुनिकता और परम्परा के दोनों पदों का प्रयोग करना चाहिये।

प्रविच्छिन्न संस्कृति और सिविल संस्कृति के टकराव की इस बेला में लोक गाथा का मंथन अनिवार्य है। लोक परम्पराओं की रक्षा सम्भवत: युगानुकूल न हो, परन्तु परम्परा के भीतर छिपे उस सनातन तथ्य को अवश्य पहचानना चाहिए जिसकी आत्मजा परम्परा को ही करवट देकर आधुनिकता में बदलती है।

—III/10

न्यू बराक हर्स्ट,
छोटा शिमला।

विविधा

महासुई कविता—एक परिचय

कु० मीना ठाकुर

शिमला पर्वतमाला की मुख्य स्थानीय भाषा का आधुनिक नाम महासुई है। इसके पहले के नाम क्योंथली-बघाटी बोली-समूह थे। इस क्षेत्र में पहले यातायात के साधन कठिन थे, जिससे लोगों का आपस में मेल जोल कम था और कभी कभी होता था।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् इस प्रदेश में सड़कों के निर्माण का कार्य बहुत जोरों से हुआ। लोगों का मेल जोल बढ़ा।

मानसिक भाव-विचार निकट आए, बोलियां विस्तृत होकर भाषा का रूप लेने लगीं।

महासू क्षेत्र अपनी परम्परा के लिए विख्यात है। परम्परा सम्प्रदाय और आधुनिकता में थोड़ा थोड़ा ही अन्तर होता है। परम्परा एक प्रकार से जीवन्त अतीत है। मानव मात्र की कुतुहली और विनोदिनी वृत्ति अतीत के तथ्यों में मनचाही बातें जोड़ कर और कुछ छोड़ कर उसे एक नया बदलता रूप देती रहती है। यही परम्परा है। जब हम अतीत के किसी आचार-विचार को बिना बदले उसी मूल रूप में स्थिर रखने का मोह करते हैं तो सम्प्रदाय बनता है। जब प्राचीन उपलब्धियों को नए संदर्भों में देखते हैं तो आधुनिकता जन्मती है।

महासू क्षेत्र मुख्य रूप से आज का जिला शिमला है, परन्तु सांस्कृतिक दृष्टि से इस में जिला सोलन और सिरमौर का कुछ भाग भी समझा जाता है। आकाशवाणी शिमला के कार्यक्रमों में महासुई बोली में दो जिलों अर्थात् जिला शिमला और जिला सोलन की बोली और संस्कृति आती है।

महासूई संस्कृति-क्षेत्र अपनी विशिष्ट नाटियों (लोक-नृत्यों) के लिए प्रसिद्ध है। शिमला पर्वतमाला का यह सांस्कृतिक क्षेत्र बहुत शीघ्रता से आधुनिक बन रहा है, परन्तु यहां का लोक-साहित्य अभी अपनी प्राचीन विशिष्टता लिए हुए है। महासूई में लोकगीतों के स्टाइल पर लोक कविताएं भी थीं। फिर जब राज्य सरकार और आकाशवाणी की ओर से पहाड़ी भाषा की कविताओं को प्रोत्साहन मिलना आरम्भ हुआ तो हिन्दी और उर्दू में लिखने वाले महासू-क्षेत्र के स्थानीय कवि महासूई में भी कविता करने लगे।

आजकल महासूई भाषा के निम्नलिखित कवि प्रसिद्ध हैं :—

(1)	श्री सी0 आर0 बी0 ललित	(चौपाल क्षेत्र)
(2)	श्री काहन सिंह जमाल	(जुब्बल क्षेत्र)
(3)	श्री हरि राम जसटा	(कोटखाई क्षेत्र)
(4)	श्री रतन सिंह हिमेश	(शिमला-मशोबरा)
(5)	श्री भीम दत्त काले	(सोलन)
(6)	श्री नरेन्द्र सिंह अरुण	(कुनिहार)
(7)	श्री नन्द लाल गर्ग	(अरकी)
(8)	श्री श्याम लाल गौतम	(दाड़लाघाट)
(9)	श्री तेज सिंह	(धुंधन)
(10)	श्री सोहन लाल	(धुंधन)
(11)	श्री धरनी धर	(धर्मपुर)
(12)	श्री जयदेव किरण	(नालागढ़)

इन बारह कवियों के अतिरिक्त भी कुछ और कवि महासूई के होंगे, जिनका परिचय अभी हमें नहीं है। इन बारह कवियों में से तीन की काव्य पुस्तकें छपी हैं—

(1)	श्री नरेन्द्र सिंह अरुण	("रंग बरंगे फुल्ल")
(2)	जयदेव किरण	("पाथरो रे माहणू")
(3)	श्री सी0 कार0 बी0 ललित	("जुएणौं रे आशू") (चांदनी के आंसू)

इन बारह कवियों की कविताओं की अपनी अलग अलग विशेषताएं हैं। उनका संक्षिप्त उल्लेख हम सामान्य रूप से करते हैं।

पहाड़ी काव्य में अभिव्यक्त पहाड़ी भावनाओं का चित्रण सराहनीय है। वे भावनाएं यहां की प्रकृति की पृष्ठभूमि और अधिक सुष्ठु रूप लिए हुए हैं। श्री सी0 आर0 बी0 ललित की पुस्तक 'जुएणौं रे आशू (चांदनी के आंसू) की कविता 'गोबरो रै घिले गाशै' से एक उदाहरण प्रस्तुत है :—

टीरौ जबै भीड़ौ चिटे,
बरफौ रे चादरौ ।
हियो आपणो तपाऊ,
न्यातै न्यातै आशुए ।

जब पहाड़ की चोटियां बरफ की चादर ओढ़ लेती हैं तो बिरहन-वियोगन अपनी छाती को अपने गरम-गरम आसुंओं से तपाती है। इस उदाहरण में प्रकृति की स्थिति और प्रेमिका की स्थिति में एक विरोधाभास है और इस से पहाड़ी महिला की पावनता का भाव भी स्पष्ट होता है।

समसामयिक सामाजिक स्थिति पर रत्न सिंह 'हिमेश' की काव्य रचनाएं प्रसिद्ध हैं। एक उदाहरण प्रस्तुत है :—

विषलै कुकुरमुत्ते ,
रगड़े जाई सको
जूते री हल्की जी
रगड़ो साथी
पर विष ता फैलणा ई।
आदमी रे पिंडे दा
ना सही
धरती रे पिंडे दा।

विषयुक्त व्यक्ति अपने विष से यदि किसी व्यक्ति विशेष को प्रभावित नहीं करेंगे तो धरती पर तो कुछ न कुछ प्रभाव छोड़ेंगे ही।

'रंग बरंगे फुल्ल' काव्य संग्रह के कवि नरेन्द्र सिंह अरुण की कविता में प्रेम-विछोह की भावनाओं का प्राधान्य है। उन की 'रेणुका रा मेला' कविता में से एक उदाहरण देखें:—

रेणुका रे मंदरा च देवी माता सामणे,
भरी लैंणी मांग संधूरी।
बिछड़े दे जन्मा रे वो जियू मिलि जाणे,
होई जाणी आस पूरी।

'काहन सिंह जमाल' आधुनिक युग के मानव की उस प्रकृति पर चोट करते हैं जिसके अधीन वह आमने सामने तो प्रेम और विश्वास की बातें करता है परन्तु पीठ के पीछे शिकायत और बुराई की बातें करता है—

'पीठे पाछे सौ शिकायतो री बातो,
मूओं काहने मुहबतों री बातों।

श्री जयदेव किरण 'पाथरो रे माहणु' काव्य-संकलन के लेखक हैं। स्टेज-कवि के रूप में उनकी प्रसिद्धि है। पहाड़ी मानवों के गौरव को प्रतिष्ठित करना उनकी कविता का मुख्य लक्ष्य है—

'इजता ते पात्थरो वे रहणे वाले रहऊंवें ,
ढकी देऊंवे सरजा जो बदलां रे खिदड़ू ,
न्हेरे घरां उजले उजाले इयां रहऊंवें।"

पर्वतों में रहने वाले लोग इज्जत और सम्मान से रहते हैं। बादल के खिदड़ू सूरज को कुछ समय के लिए ढांप सकते हैं परन्तु सूर्य का उजाला समाप्त नहीं होता।

महासूई कविता का संकलन अभी उभर ही रहा है। ज़िला शिमला और सोलन के कवि अब एक मंच पर अपनी रचनाएं पढ़ने लगे हैं, अतः महासूई कविता का सांझी मुहावरा बनने लगा है।

—गांव कवारा (कसुम्पटी),
ज़िला शिमला।

शब्द श्री

—मनसा राम शर्मा 'अरुण'

(1) कौशनो (शि0 पू0)	बान्धना, ।
कस्सणा (शि0 प0)	झाड़ डालना ।
प्रयोग	**हिन्दी अनुवाद**
(क) रौशटा आच्छो कौशनो जाओ ।	(क) रस्सी अच्छी तरह से कसनी पड़ती है ।
(ख) एसी छोटू रौशटिए कौश ।	(ख) इस लड़के को रस्सी से बान्ध ।
(ग) विद्वानां जो कस्या जाई ।	(ग) (उसने) जाकर विद्वानों को डांटा ।
(घ) चोर कस्स्या भेत दस्सया ।	(घ) चोर बान्धा कि भेद खुला ।

व्युत्पत्ति—काश और कृष से निष्पन्न क्रियार्थक संज्ञा शब्द ।

शब्द	हिन्दी
(2) खरकणू (शि0 पू0)	(क) झाड़ू
खरकणा (शि0 प0)	(ख) सफाया करना,
प्रयोग	**हिन्दी अनुवाद**
(क) खरकणू लै होर स्हूड़ा संगेल ।	(क) झाड़ू ले और कूड़ा इकट्ठा कर ।
(ख) पक्का जेहा खरकणा वणा ।	(ख) पक्का सा बड़ा झाड़ू बना ।
(ग) फेरीत्या सारे गोंआं खरकणा ।	(ग) सफाया कर दिया सारे गांव का ।
(घ) खरे कम्मा पर खरकणू नीं फेर ।	(घ) अच्छे काम को नष्ट न कर ।

व्युत्पत्ति—खर-कोण या कण से मिलकर निष्पन्न संज्ञा ।

शब्द	हिन्दी अर्थ
(3) खोला (शि0 पू0)	खाई, खाली जगह, नष्ट करना ।
खोला (शि0 प0)	

प्रयोग	हिन्दी अनुवाद
(क) मेरी जौंघ खोलेन पोड़िया मोमुई।	(क) मेरी टांग गढ़े में पड़ कर मोच गई।
(ख) देखीने चल्यां रस्ते च खोलें ए।	(ख) देखकर चलना रास्ते में खाइयां हैं।
(ग) पाईती ना खोलेच गल्ल।	(ग) डाल दी न गड्ढे में बात।
(घ) नच्चीने खोलें पाईते।	(घ) खूब नाच किया।

व्युत्पत्ति—खोल् (गति वैकल्ये) से बना हुआ संज्ञा शब्द।

शब्द	हिन्दी अर्थ
(4) गारड़ (शि0 पू0) गर्ड़ (शि0 प0)	पक्षी, घराट का यन्त्र, केलाफल, सलवार का भाग।

प्रयोग	हिन्दी अनुवाद
(क) गरड़ पंछियांरा राजा आ।	(क) गरुड़ पक्षियों का राजा है।
(ख) गरड़ा पर नालीते पाणी पौणेते घराट कम्म करने लगदा।	(ख) लकड़ी के यन्त्र पर जब नाली के द्वारा पानी गिरता है तो घराट चलने लगता है।
(ग) गरड़ पक्कीगिरा।	(ग) केले के फलों का गुच्छा पक गया है।
(घ) सल्वारी रा गर्ड फटी चल्या।	(घ) सलवार के बीच का भाग फटने लगा है।

व्युत्पत्ति—'गरुड़' संस्कृत के तत्सम शब्द का अपभ्रंश रूप। ग से निष्पन्न।

शब्द	हिन्दी अर्थ
(5) ग्वींत, गुईंत (शि0 प0) गऊंच (शि0 पू0)।	गोमूत्र, पेशाब, दिल छोड़ना।

प्रयोग	हिन्दी अनुवाद
(क) ग्वींता च कपड़े धो।	(क) गोमूत्र में कपड़े साफ कर।
(ख) पूजाखे गऊंच लागो।	(ख) पूजा के लिये गोमूत्र लगता है।
(ग) बल्हद ग्वींत करादा।	(ग) बैल पेशाब कर रहा है।
(घ) मींक विपता पई होर हुईग्या ग्वींत।	(घ) छोटी जैसी विपदा पड़ी और दिल तोड़ दिया।

व्युत्पति—'गोमूत्र' से बना हुआ तद्भव शब्द (संज्ञा)।

शब्द	हिन्दी अर्थ
(6) घण्डू (शि० प०)	कण्ठ, गला।
कहण्डु (शि० पू०)	चिल्लाना।

प्रयोग	हिन्दी अनुवाद
(क) हण्डुए साही घण्डू।	(क) हंडिया के समान कण्ठ।
(ख) तेरे घण्डुए क्या फस्या?	(ख) तुम्हारे गले में क्या अटका?
(ग) कैंह् फाड़यारदा घण्डुए!।	(ग) क्यों चिल्ला रहे हो?
(घ) तिसरा घण्डू बैठीग्या बोलीने।	(घ) उसका गला बैठ गया बोल कर।

व्युत्पत्ति—गडि,—कठि> गण्ड, कण्ठ से (परिवर्तित) बना हुआ संज्ञा शब्द।

शब्द	हिन्दी अर्थ
(7) चोंजरी, चोंजटी (शि० पू०) चूंज (शि० प०)	चोंच, शिखर प्रभाव, अधिकार क्षेत्र।

प्रयोग	हिन्दी अनुवाद
(क) हाटूरी चोंजरी गार्शं दीह पौड़ोदो।	(क) हाटू के शिखर पर हिम पड़ा है।
(ख) जेति से दाख वी पाकी कौएरी चोंजरी वी चूटी।	(ख) जब वह दाख पकी तो कौए की चोंच भी टूट गई।
(ग) कलासारी चोंजरी भजीगी।	(ग) गिलास का ऊपरी भाग टूट गया।
(घ) तिसरी चूंज वड़ी लम्मी ई।	(घ) उसका प्रभाव दूर तक है।

व्युत्पत्ति—चंचु+र:+ई इस प्रकार प्रयोग के धरातल पर रगड़ खाकर बना हुआ तद्भव शब्द, संज्ञा।

शब्द	हिन्दी अर्थ
(8) छौशणा, शौशणा (शि० पू०) झस्सणा (शि० प०)।	मलना, शान्ति देना, आगे पीछे फिरना।

प्रयोग	हिन्दी अनुवाद
(क) मूंडौ छौशणे खे तेल।	(क) सिर मलने के लिए तेल।
(ख) तिसरे कालजुए झस्स जाई ने।	(ख) उसके कलेजे में जाकर शान्ति पहुंचा।
(ग) पैरां झस्स्हूगा तांई कम्म बण्हगा।	(ग) आगे पीछे फिरेगा तभी काम बनेगा।

व्युत्पत्ति—शश् या झष् से बनी क्रियार्थ-संज्ञा।

—राज्य भाषा संस्थान,
सोलन (हि० प्र०)।

tharahkardu.in

हमारी शब्द–सम्पदा

शब्द	अर्थ	वाक्य	वाक्य हिन्दी अर्थ
1. अगला	उत्तावला, ओछा	सै सारे ग्रावां विच अगला।	वह सारे ग्राम में अगला (उतावला) है।
2. अल्ल	बड़ी लौकी	इधी वेली वड्डी अल लगी री।	इस बेल में बड़ी लौकी लगी है।
3. अलसण	एक छोटा सा वृक्ष जिसमें लम्बी और सींगों जैसी फलियां लगती हैं।	अलसणा री टाटां पई गई रियां।	अलसण (अमलतास) की फलियां पड़ गई हैं।
4. आल्	खड्ड के जलाशय	सीर खड्डा री डूघी आल ही।	सीर खड्ड की डूघी आल् है।
5. आहला	घौंसला	चिड़िया रा आहला	चिड़िया का घोंसला है।
6. आउश	1. घर, घौंसला	एस छापड़ौ गाशौं कनशैंरीय आउश टैवो।	1. इस छत्त पर एक पक्षी ने घौंसला बनाया।
	2. आत्मा, जान	तेसरो आउश तो एक तोतै दो।	उसकी आत्मा एक तोते में है।
7. आहण	ओले	आहण पई, खेती गई।	ओले पड़ने से खेती नष्ट हो गई।
8. इहबका	इस बारी	जिह् यां-किहयां इहबका वगत लंघी जाए फिरी तां लांगा कन्ना सौग्गी हत्थ।	जैसे कैसे यह समय निकल जाए अगली बार तो कानों से हाथ लगाया।
9. इच्छणा	चाहना या इच्छा करना।	सै जे दुज्जे रा बुरा इच्छां ए तिहनां रा अपणा ई बुरा हुआंह।	वह जो दूसरे का बुरा चाहते हैं उनका अपना ही बुरा होता है।

शब्द	अर्थ	वाक्य	वाक्य हिन्दी	मुहावरा/ लोकोक्ति
10. उआन उ-आन	घर का मुख्य कमरा	म्हारे उआने च कोई पंज मंजे डैह् दे हन	हमारे घर के मुख्य कमरे में पांच पलंग बिछते हैं।	ओबरी उआन करना (बेचैन रहना)
11. उब्बड़	1. बिन बोये बीज का अंकुर।	जिमियां खरे की नी गुहारीयें तां फसला कनैं उब्बड़ बी मते उगी पौंदे।	जमीन को अच्छी तरह न खोदें तो बिन बोये बहुत से बीज फसल के साथ उग आते हैं।	
12. ऊजो	लगन	जीओ दा ऊजो चैंही	दिल में लगन चाहिए।	
13. एवटर	बर्फ का गोला	तीनैं लाई एवटरौ गिनैं।	उसने बर्फ का गोला फैंका।	
एरण्ड	1. एरण्ड का पेड़ 2. एरण्ड के फल	जित्थी डाल नी हुंदे उत्थी एरण्ड जो बी डालां च गिणाएं।	जहां वृक्ष नहीं होते वहां एरण्ड को भी वृक्षों में गिनते हैं।	
14. ओड़ना	रोकना, फैलाना, बाड़ लगाना।	तेसरैं बाधौ खेच ओड़ो दौ।	उसने सारे खेत पर बाड़ लगा रखी है।	
15. ओड़ु	खेत का एक भाग	तैसरैं एक ओड़ु दैं जौ बीजे हैं।	उसने खेत के एक भाग में जौ बीजें हैं।	
16. ओशू	इस वर्ष	ओशू सेब आच्छैं बीकैं।	इस वर्ष सेब अच्छे बिके।	
17. ओवरी	घर के भीतर का गुप्त कमरा।	स्याले-च गु:रमिया ओवरिया छड्डी करी उआनें कुण सौंऐ!	शीतकाल में गरमाए हुए भीतरी कमरे को छोड़कर मुख्य कमरे में कौन सोए।	
18. कौशनो	1. बांधना 2. झाड़ डालना	रौशटा आच्छो कौशनो जाओ। 2. सैं कौश बैं एहरा सैं भि जाणौ हौला।	रस्सी अच्छी तरह बांधनी पड़ती है। 2. उसे झाड़ ऐसी मिली, वह भी जानता होगा।	
19. कनांड	बेवकूफ	1. तेस कनांडौ संगैं न लागे।	उस बेवकूफ के साथ न लगना।	

शब्द	अर्थ	वाक्य	वाक्य हिन्दी	मुहावरा/लोकोक्ति अर्थ
20. कासि	फसल या घास काटते समय जितने तिनके मुट्ठी में आएं।	1. घा री, कणकारी कासी बड्ढी।	घास गेहूं की कास्सी काटी।	
21. कस	मधुमक्खी का छत्ता	भौरा री कस्स	मधुमक्खी का छत्ता।	
22. कसर	फर्क	क्या कसर बाकी?	क्या कसर बाकी है?	
23. कारन	1. जादू टोना	कई लोक मनदे जे कारन कितुरा हो तां दवा असर नी करदी।	कुछ लोगों का विश्वास है कि यदि जादू टोना किया गया हो तो बीमार पर दवा (औषधि प्रयोग) असर नहीं करती है।	कारनां जो पिपलियां री धूणी। (बुरे कार्यों के लिए कड़ी सजा)
	2. निमित, हेतु	कारनां रे गुण कारजा च आई जांदे।	कारण के गुण कार्य में आ जाते हैं।	लड़ाई या कारन (अर्थ) झगड़े की जड़।
24. कण्डा	1. कांटा	ग्वाला रे पैरा कण्डा चुभी गया।	गोपाल के पैर में कांटा चुभ गया।	कण्डा कण्डे ते खुलदा (अर्थ) किसी वस्तु का उसके समान वस्तु से विनाश।
	2. शत्रु बाधा	सै वी मेरे रस्ते च कण्डा ई था। तिसरा दिमाग कण्डे साही तेज था।	वह भी मेरे रास्ते में कांटा ही था। उसका दिमाग कांटे की तरह तीखा है।	कांडे रा मुंह पहले ही तेज। (अर्थ) होनहार, तीखा।
25. कुकड़ी	1. मक्की	1. सयाले री मौसमा मंज कुकड़ी री रोटी बड़ी स्वाद लगदी।	सर्दी के मौसम में मक्की की रोटी स्वाद लगती है।	
	2. मुर्गी	2. देसी कुकड़ी रा अण्डा ई ताकतवर हुआं।	देसी मुर्गी का अण्डा ही ताकतवर होता है।	

शब्द	अर्थ	वाक्य	वाक्य हिन्दी	मुहावरा/लोकोक्ति
26. कमलोग्रा	1. कमल के फूलों का केसर	कमलोग्रा पेटा रे कीड़ेरा इलाज करा हां।	कमलोग्रा पेट के कीड़ों का इलाज करता है।	
27. खीशना	खुश होना	तेस मिलियौ से खशिबुग्रा।	उसको मिलकर वह खुश हुग्रा।	
28. खरकणू	वृक्षों की छड़ियों से बनाया गया झाड़ू	गोहे जो खरकणू कन्ने साफ कर।	गोबर को छड़ियों के झाडू से साफ करो।	
29. खिहण	देवयज्ञ, किसी शुभ दिन देवता ग्रौर उनके कारिन्दों को घर बुलाकर सब को भोजन दिया जाता है।	तेसरैं थी दुई देवौ री खीहण।	उसने दो देवताग्रों का यज्ञ किया।	
30. खुमली	सभा, गांव या इलाके के सभी लोगों को बुलाकर बातचीत करना।	तुंहरैं गैही री खुमली थी?	ग्रापने किस लिए सभा की?	
31. खोट	1. बाधा, दोष	1. जो खेल ग्राई, पता लगेग्रा, भई नारसिंघा रा खोट।	जब खेल (देव शक्ति) ग्राई तो पता चला कि नारसिंह का 'दोष' था।	
	2. दोष	2. तिसरा क्या खोट?	2. उसका क्या खोट?	
	3. मिलावट	3. सन्यारे खोट पाया।	3. सुनार ने खोट डाला।	
32. खैर	1. खैर नाम से प्रचलित एक वृक्ष।	1. खैरा री फलियां पशुग्रां जो खरी होई।	1. खैर की फलियां पशुग्रों को ग्रच्छी होती हैं।	
	2. कुशलता	2. जे तू जाणा तां तिनां री खैर खबर लै।	2. यदि तूने जाना है तो उनका कुशल समाचार ले।	
33. खूंद	ऐसा व्यक्ति जिसने शत्रु का सिर काटा हो।	टौहाल ग्रो बड़ाल टाहू-खूंद ग्रौ।	टाहू ग्रौर बड़ाल गांव वाले खूंद हैं।	

शब्द	अर्थ	वाक्य	वाक्य हिन्दी	मुहावरा/ लोकोक्ति
34. गऊंच	गाय का मूत्र	पूजै रिव गऊंच लागौ।	पूजा के लिए गाय का मूत्र प्रयोग किया जाता है।	
35. गुलुवो	मीठा	गुलुवो बाड़ी टैंव।	मीठा हलुवा बनाओ।	
36. गेल	वहिष्कार	सै कीया वाधै गाँव आलैं गेल।	उसका सारे गांव वालों ने वहिष्कार किया।	
37. गोह	गोधा, छिपकली 1. की शक्ल वाला बड़ा जानवर	बंगाली गोहा, रा मास वी खाई लैंहें।	1. बंगाली गोह (गोहा) का मांस भी खा लेते हैं।	
	2. सुस्त काम करने वाला।	2. सै कोई कम्म थोड़े ई कराहं गोहां साही रघड़ी रहयां हा।	2. वह कोई काम थोड़े ही करता है गोह जैसा घसीटता रहती है।	
38. गरड़	पक्षी विशेष	गरड़ पैंछिया रा राजा हुंदा।	गरुड़ पक्षियों का राजा होता है।	गरड़ारीया चाली वाला (अर्थ) वेगवान (Speedy)
	2. घराट की चक्की को फेरने वाला पखुड़ियों वाला लकड़ी का एक संयन्त्र।	पाणी घट होए तां गरड़ नी फिरदा।	अपेक्षित पानी से कम होने पर गरड़ नहीं घूमता है।	घराटा रा गरड़ (अर्थ) मुख्य आधार
	3. कदली फलों का गुच्छा	इक्की थम्मा जो दो गरड़ कदी नी पौंदे।	एक कदली स्तम्भ को दो फलमय गुच्छे कदापि नहीं लगते हैं।	बिणा गरड़ा ते केला (अर्थ- निरर्थक व अनुपयोगी वस्तु)।
39. गोयड (गोरन)	पशुशाला	सै जे तिने गोयड वणाईरा तिस पंज माल बज्झी सक्काएं।	वह जो उसने पशुशाला बनाई है, उसमें पांच पशु बंध सकते हैं।	
घीण	दया	मूं लागि तेसरी बड़ी घीण।	मुझे उस पर बड़ी दया आई।	

शब्द	अर्थ	वाक्य	वाक्य हिंदी	मुहावरा/लोकोक्ति
40. घोच	गाय-बैल का रस्सी में बंध कर मर जाने का पाप।	तेसरै गोई घोये एबै जाओ नहांदै डेवणे।	उसके हाथों गाय बैल की मृत्यु हो गई उसे पाप निवारण के लिए हरिद्वार जाना पड़ता है।	
	2. तंग करना	2. जादि घोच आच्छी नहीं हुन्दी।	ज्यादा तंग करना अच्छा नहीं होता।	
41. चौरा	देवी-देवता के बैठने का पवित्र स्थान, (कुछ चौकोर पत्थर जोड़ कर पवित्र जगह निश्चित की जाती है जहां देवी देवता को बिठाया जाता है।)	देवौ रा चौरा कोण असौ?	देवता का पवित्र स्थान कहां है?	
42. चोंजरी	1. टीर, शिखरी	1. हाटु री चोंजरी गाशै दीह पौड़ो दो!	हाटू की चोटी पर बर्फ गिरी है	ज़ेति से दाख भि पाकी
	2. चोंच।	2. कौवे री चोंजरी दो काये?	कौवे की चोंच में क्या है?	कौवे री चोंजी भी चूटि।
43. छल्याल वाढा	1. मक्की की कटाई का मौसम।	1. छल्यालुवाढे रे धुप्पे बड़े तेज़ होआंएं।	मक्की की कटाई की धूप बड़ी तेज़ होती है।	
	2. मक्की की कटाई	2. क्या तुसां री तरफा छल्याल वाढा पई गई रा?	क्या आपकी ओर मक्की की कटाई आरम्भ हो गई?	
44. छल्याली	वह भूमि जहां मक्की बीजी जाती है।	छल्याली इस साला काठी होई गई री	मक्की बीजी भूमि इस साल कठोर हो गई।	
45. जोत	योक्त्र	बहनु रे जोतें हालिये जो रोटी नी खाणी चाहिंदी।	हाली को चाहिए कि बैलों के जुते रहने की स्थिति में भोजन न करे।	जोतुरा बल्द। यथा – कर्जदार भी जोतुरा बल्द हुंदा। बन्धुआ, बन्धक मज़दूर।

शब्द	अर्थ	वाक्य	वाक्य हिन्दी	मुहावरा/ लोकोक्ति
	2. प्रकाश	मोतिया होने पर आक्खीं री जोत चली जांदी ।	मोतिया होने पर आंखो में दिखाई नहीं देता ।	रोई ने आक्खी री जोत गवाणा (अर्थ) किसी के वियोग में अधिक तड़पना।
	3. पूजार्थ प्रयुक्त दीप	सवेरे कन्ने संजा जोत करनी चाईदी।	प्रातः सायं घृत दीप करना चाहिए।	करने धूपजोत कने कमाणे पाप—बाह् य आडम्बर कुछ और तथा आन्तरिक स्थिति कुछ और।
46. छोड़	1. शीघ्र, तुरन्त 2. छोड़ [सताबी, शीवे]	छोड़-छोड़ मत ला नी तां कोई न कोई गल्ती होई जाणी।	जल्दी मत कर नहीं तो कोई गल्ती हो जाएगी।	छोड़ लाणा।
47. जुहण	चन्द्रमा	पुणो री जुहण निकली गोई ।	पूनम का चन्द्रमा निकल गया ।	
48. झुड़का	तलाक	तीसरौ गोए झुड़कै आणि।	उसको तलाक दे दिया है !	
49. झाड़ी	1. गालियां देना	पाठ याद नी हुंगा तां स्कूला वी मास्टरा झाड़ी ही देणी ।	पाठ याद नहीं होगा तो भी स्कूल में मास्टर जी ने गालियां ही देनी हैं।	
	2. गिराना	2. रामू री पीठी पर धूड़ जमीरी ई रईपर रल्लुए नी झाड़ी।	रामू की पीठ पर धूल जमी रही पर रल्लु ने उसे साफ न किया ।	
50. झग्गु	कमीज़	तेरा झग्गु बड़ा छैल सीत्ती रा ।	तेरा कमीज़ बहुत अच्छा सिला है ।	
51. टाटो	तंग	एहे ताबां टाटोऔ।	यह पाजामा तंग है !	
52. टैली	जोर की आवाज़	मेरी टैली कुणहे न शुणि ।	मेरी आवाज़ किसी ने नहीं सुनी ।	

शब्द	अर्थ	वाक्य	वाक्य हिन्दी	मुहावरा/ लोकोक्ति /अर्थ
53. टोहल	बड़ी चट्टान	बरसाती च टोहली गास बेही नै अम्ब चूपणे दा बड़ा मजा औंदा।	बरसात के मौसम में चट्टान पर बैठकर आम चूसने का बड़ा मजा आता है।	उठी कै कम्मैं लग्गा करा, पैरां टोहल थोड़ीए लग्गी ओ।
54. ठौड़	ग्राम-देवता का पवित्र स्थान, वह जगह जहां खूंद लोग शत्रु का सिर काट कर दबा देते थे।	बडैयोरी ठौड़ि ऐ सदा जागदी रौहे।	बडैयो गांव की ठौड़ सदा जागती रहे।	
55. डिंगै	लाठियां	तिन्हौ बाघै रै डिंगै तै उठाउऐ दौ	उन सब ने लाठियां उठाई थीं।	
56. डिबरी	इकट्ठा जल	डिबरी भौखी गई।	इकट्ठा जल भर गया।	डूंगी मैरियै डिबरी, पानी भौरिला डोलै डोलै।
57. डीम	शिखर-शैली का ऊंचा मन्दिर।	गोव दो देवौ रा एक डीम ओ।	गांव में देवता का एक मन्दिर है।	
58. डाफी	बरामदे में बनी लकड़ी की बैठक।	बनी डाफी गाशै बोश।	डाफी पर बैठो।	
59. डकार	ढाक, ढंकार	ढाकौ ढंकारौ दे रौ-हणै बोचियौ।	पहाड़ों से बच कर रहना।	
60. तोल	नीचे	तेसरो घौर ओ तोल पौ।	उसका का घर तो नीचे है।	
61. तौंग	बरामदा	सैंई आजा तौंगौ रे थूंडै, खाडू काटौ फेरूवै मूंडै।	शिवजी आए बरामदे के कोने पर, गोल-सींग वाले खड्डू काटो।	
62. तोरनो	1. तलाक	1. तोरनौ रो तानौ जालो।	उसको तलाक देना पड़ेगा।	
	2. पार करना	2. ऐह छोहटू पार तोरनो जालौ।	इस बच्चे को पार कराना होगा।	
63. थाटनो	1. बातचीत करना, सोच विचार करना।	1. का थाटि लाओ औ माथा ?	1. क्या बातचीत हो रही है ?	
	2. समझौता	2. जो झौगड़ै हुओ सै थाटनै जाऔ।	जो झगड़े होते हैं उनका समझौता करना पड़ता है।	

गति विधियां

20 दिसम्बर, 1975 के दिन घुमारवीं (जिला बिलासपुर) में कृषि, भाषा एवं संस्कृति मन्त्री श्री लाल चन्द प्रार्थी की अध्यक्षता में एक पहाड़ी कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया। कवि सम्मेलन में प्रदेश के विभिन्न भागों से आए लगभग 15 कवियों ने भाग लिया। इसी अवसर पर अकादमी के नए प्रकाशन 'ऋतम्भरा' का विमोचन किया गया। 'ऋतम्भरा' में हिमाचल प्रदेश के 12 संस्कृत कवियों की कविताओं को हिन्दी अनुवाद सहित संकलित किया गया है।

दिनांक 21 दिसम्बर को घुमारवीं में ही एक लेखक गोष्ठी का आयोजन हुआ। विचारार्थ विषय था—'पहाड़ी भाषा के ठेठ शब्द', इस गोष्ठी में 150 ठेठ पहाड़ी शब्दों पर विचार विनिमय हुआ और निर्णय लिया गया कि ठेठ शब्दों का विधिवत चयन तथा संरक्षण किया जाये। उस गोष्ठी में विवेचित शब्द हम सोमसी में क्रमशः प्रकाशित करते रहेंगे।

जनवरी 1976 में 'माला रे मणके' पुस्तक का प्रकाशन सम्पन्न हुआ। इस पुस्तक में पहाड़ी कवियों की पहाड़ी रचनाएं संकलित हैं। पुस्तक राजकीय प्रैस शिमला में मुद्रित हुई।

त्रैमासिक पत्रिका 'सोमसी' का जनवरी अंक 1976 अर्थात वर्ष दो, अंक एक की सामग्री का सम्पादन सम्पन्न करके डम्मी तैयार करके राजकीय प्रैस शिमला को मुद्रणार्थ भेजी। यह अंक मार्च 1976 में प्रकाशित हुआ।

फरवरी 1976 के प्रथम सप्ताह में बसन्त पंचमी के दिवस पर नाहन में यथापूर्व हिन्दी कवि सम्मेलन का आयोजन सम्पन्न किया।

सिरमौर के इतिहास के सम्बन्ध में श्री परमानन्द शास्त्री नाहन निवासी के काव्य ग्रंथ 'इन्दु काव्यम्' की सामग्री की प्रैस डम्मी तैयार करके प्रैस को मुद्रणार्थ भेजी गई। यह प्रकाशन इस समय प्रूफ स्टेज में है।

दिनांक 28 फरवरी 1976 को शिवरात्री के दिन अकादमी के अधिशासी निकाय (Governing Body) के द्वारा गठित विशेषज्ञ उप-समिति की बैठक परिमहल में अध्यक्ष अकादमी श्री लाल चन्द प्रार्थी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई।

इस समिति ने सिद्धान्त रूप से तीन महत्त्वपूर्ण स्कीमें अनुमोदित कीं और (Governing Body) की स्वीकृति के लिए अग्रेषित की।

(1) लोक-गीत-मन्दिर—हिमाचल के लोकगीतों के डौकुमैंटेशन की स्कीम।

(2) सैन्ट्रल कल्चरल ट्रुप।

(3) स्कूलों में सांस्कृतिक कार्यक्रमों को करवाने के लिए अध्यापकों को हिमाचल-नाटी का प्रशिक्षण देने के लिए दो सप्ताह का रिफ्रेशर कोर्स।

(4) अकादमी के प्रकाशनों को पाठकों तक पहुंचाने के लिए विशेष प्रबन्ध किए गए। जिला शिक्षाधिकारी सिरमौर (नाहन) को एक-एक सौ प्रतियां भिजवाने की व्यवस्था की गई।

इसके अतिरिक्त अकादमी द्वारा प्रदेश की एक प्रसिद्ध लोक-कथा 'लटी सरजङ् तथा हिंनाडुण्डुब' को नाट्य-रूप में मंचित करने हेतु हस्तलेख तैयार करवा कर रिहर्सल आरम्भ करवाई गई। नाटक की रिहर्सल समाप्त-प्रायः है और अब यह महत्त्वपूर्ण उपलब्धि दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत होने की बाट जोह रही है। इस नाटक का उद्देश्य प्रदेश की समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा को समन्वित रूप से सुरक्षित तथा सम्प्रेषित करना है। इसके द्वारा पर्वतीय जन-जीवन तथा सांस्कृतिक इतिहास का समग्र एवम् गुम्फित रूप प्रस्तुत हो सकेगा।

लोक मानस जिन भावों को नितान्त निजी तथा गहन समझता है, उनकी अभिव्यक्ति गद्य में नहीं होती तथा उनके प्रकटाव के लिए लोकगीतों तथा कहावतों का आश्रय लिया जाता है।

—मेरियोन एच० डकन

समीक्षा

पुस्तक का नाम : छनाट
पृष्ठ : 167
मूल्य : बारह रुपए मात्र
मुख्य सम्पादक : श्री लाल चन्द प्रार्थी
प्रकाशक : सचिव, हिमाचल कला–संस्कृति–भाषा अकादमी, परीमहल, शिमला-171009 ।

भास के काव्य में कविता-कामिनी के अनायास हास का विलास प्रचुर मात्रा में मिलता है। संस्कृत आचार्यों के अनुसार काव्य में नाटक का भी समावेश है। अतएव कहा गया है कि "काव्येषु नाटकं रम्यम्"। संस्कृत नाटक में काव्य और मंचगत तत्वों के इस विलक्षण मिश्रण का परिणाम भास के परवर्ती नाटककारों में प्रायः यह हुआ है कि नाटकीयता–रूपी नन्हीं निरीह बाला को कविता–माता की झोली में डाल दिया गया। परिणाम-स्वरूप कविता पनपी, परन्तु नाटकीयता ने केवल अपनी नई जननी की गोद भरने का काम किया। अस्तु, यह स्थिति भास के नाटक–साहित्य में नहीं मिलती। उनके चक्षु अनवरत सामाजिकों की ओर गड़े रहते थे, इतना तक कि उन्होंने कुछ परम्परा प्राप्त नाटक नियमों का अतिक्रमण करके भी अभिनेयता की रक्षा की। भास के नाटकों में काव्य-तत्व भी अपरिमित हैं पर उसके साथ-साथ उनके नाटकों में कथा-गति, भाषा-सारल्य, रोचक कथोपकथन, अर्न्तद्वन्द्व के झंझावत में फंसे जीते-जागते पात्रों का मनोवैज्ञानिक चरित्र-चित्रण तथा रंगमंच की दृष्टि से उपयुक्त निर्देश भी हैं। हाल ही में (अंग्रेज़ी दैनिक 'द' स्टेट्समैन' में 17 जनवरी 1976 को प्रकाशित एक समाचार के अनुसार) भास-प्रणीत नाटक "दूतवाक्यम्" के हिन्दी रूपान्तर को 'द लिटल थिएटर ग्रुप' द्वारा सफलता पूर्वक अभिनीत किया गया है। इस कथन में अतिरंजना न होगी कि भास नाटकीयता की दृष्टि से संस्कृत साहित्य के शिरोमणि कवि हुए हैं। तभी तो संस्कृत "कवि कुल" के अवतंस कालिदास ने भी अपनी कृति मालविकाग्निमित्रम् में भास को "प्रथितयशाः" कह कर श्रद्धापूर्वक स्मरण किया है।

संस्कृत के ऐसे प्रतिष्ठित नाटककार के कुछ नाटकों को पहाड़ी में भाषान्तरित करने की योजना सर्वथा प्रशंसनीय है और उसमें स्वप्नवासवदत्तम् को शामिल करना और

भी अधिक श्लाघनीय है क्योंकि यह वह नाटक है जिसके लिए अग्नि ने जलाने की बजाय पवित्र करने का काम किया था (भास नाटक-चक्रेणु छेके क्षिप्ते परीक्षितुम्। स्वप्नवासव दत्तस्य दाहको ऽभूत् न पावक :।।)। अनुवादार्थ नाटकों का चयन सुन्दर तथा सुनियोजित है। छनाट में भास के छः नाटकों का पहाड़ी अनुवाद सम्मिलित है। ये नाटक हैं :– 'स्वप्नवासवदत्तम्' (स्वप्नवासवदत्ता), 'पञ्चरात्रम्' (पञ्जरातीं), 'बालचरित', दूत-वाक्य', 'अभिषेक नाटक' तथा 'दूतघटोत्कच'। कथा-स्रोत के आधार पर भास के नाटक चार प्रकार के माने जाते हैं —:

रामकथा पर आधारित नाटक, महाभारत पर आधारित नाटक, बृहत्कथा पर आधारित नाटक तथा अन्य। छनाट में सम्मलित छः नाटकों में से तीन (पंचरात्र, दूतघटोत्कच तथा दूतावाक्य) महाभारत पर, एक (स्वप्न) बृहत्कथा पर, एक (अभिषेक) रामायण पर तथा एक (बालचरित) कृष्ण-कथा पर आधारित हैं। रूपक-विधा की दृष्टि से भास के नाटकों को हम आधुनिक मापदण्डों के अनुसार दो विधाओं में विभक्त कर सकते हैं— एकांकी तथा अन्य। छनाट में दो एकांकी (दूतघटोत्कच तथा दूतावाक्य) और चार अन्य नाटक सम्मिलित हैं। इस योजना से भास की नाट्य-कला अपने गौरव–पूर्ण रूप में उभर कर सामने आती है।

एक इताली कहावत है कि "Traduttor Traditori" अर्थात "भाषान्तरकार गद्दार होते हैं।" इस उक्ति का कारण केवल यह है कि अनुवाद इतना दुष्कर कार्य होता है कि किसी भाषा में व्यक्त भाव को उसकी सार्थकता तथा भाषा–सौष्ठव को बनाए रखते हुए किसी अन्य भाषा में व्यक्त करना अत्यन्त कठिन होता है। हर भाषा के अपने विशेष गुण होते हैं जो कि उसके विशिष्ट इतिहास तथा उसे बोलने वालों के "विशिष्ट सांस्कृतिक धरातल" से अविच्छेद्य रूप से जुड़े होते हैं। भेद–भाव में भेदभाव खोजना असम्भव को सम्भव बनाने का प्रयत्न करने के समान है। उदाहरणतः "सनीरनीरद" तथा "सजलजलध" को संस्कृत से किसी अन्य भाषा में अनुवाद करते समय इन शब्दसमूहों को अलंकृत करने वाले अलंकारों के गायब होने की सम्भावना सदा बनी रहेगी, जब तक कि हम मूल शब्दों से न चिपटे रहें। प्रस्तुत पुस्तक में भी "कृष्णमतिः स कृष्णः" के स्थान पर "से काली अक्ला रा आदमी कृष्ण', "नयनाभि रामस्य रामस्य" की जगह "नैणो रै पैरे रामै' तथा "हेममालिन वालिनम्" के स्थान पर "सूनै री मालै धारणै आलै वाली" कहने की क्रिया में मूल नाटकों में प्रयुक्त अनुप्रास आदि अलंकार लुप्त हो गए हैं, परन्तु यह अपरिहार्य था।

मूल नाटकों में गद्य भी है, पद्य भी। गद्य का अनुवाद अपेक्षाकृत सरल होता है परन्तु पद्य का दुष्कर। अतएव 'पंजरातीं' तथा 'दूतवाक्य' में पद्यों के अनुवाद के लिए भी गद्य का सहारा लिया गया है। उधर 'बालचरित,' 'अभिषेक' तथा 'दूतघटोत्कच' म पद्य को कहीं गद्य तथा कहीं पद्य में अनूदित किया गया है। यहां यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि मूल नाटकों में बहुधा छन्दों का चयन अभिव्यक्त-भाव आदि के अनुकूल है। उदाहरणतः पञ्चरात्रम के पद्य "अध्वानमतिमुक्तजवैस्तुरंगैः . . . . दुःखेन यान्ति तुरगा विषमा हि भूमिः" में प्रयुक्त वसन्ततिलका (ऽऽ। ऽ।। ।ऽ। ऽऽ)

के हर चरण में सात लघु तथा सात गुरु अक्षरों के विन्यास से (कौन्तेय द्वारा मारे गए हाथियों के शवों से अवरुद्ध) मार्ग की विषमता पाठक की आंखों के सामने एकदम चित्रवत् खड़ी हो जाती है। गद्य-साधन से अथवा किसी अन्य छन्द में किया गया अनुवाद ऐसा चित्र प्रस्तुत करने की उतनी क्षमता नहीं रखता। वासवदत्ता, के अनुवाद-कला-निष्णात भाषान्तरकार ने भास के पद्यों को कविता-रूप में ही पहाड़ी में प्रस्तुत किया है और कहीं-कहीं उस कविता को भास द्वारा प्रयुक्त छन्द-परिधान से ही आभूषित किया है। काम कठिन था, परन्तु फल सामने है। दुर्गा दत्त जी भास द्वारा व्यक्त भाव-स्रोतस्विनी को पहाड़ी के माध्यम से अकलुषित रूप में पाठकों तक पहुंचाने में पूर्णतः सफल हुए हैं। बानगी प्रस्तुत है । पहले पढ़िए भास द्वारा लिखित निम्न पद्य :-

पूर्वं त्वयाप्यभिमतं गतमेवासी
त्छलाध्यं गमिष्यसि पुर्नविजयेन भर्तुः ।
कालक्रमेण जगतः परिवर्तमाना
चक्रारपंक्तिरिव गच्छति भाग्यपंक्तिः ॥

अब पढ़िए इसका अधोलिखित पहाड़ी रूपान्तर :-

इंञांह् ई तूं वी चलदी रही एं
भिरी मजे ने चलणा निहाल ।
पैंह्या रथे दा घुमदा जि जिञांह्
घुम्मे नसीबां पलड़ा वि तिञाह् ॥

प्रयास सफल है, स्तुत्य है।

सामान्यतः, छनाट-यज्ञ में आहुति डालने वाले विद्वान् भाषान्तरकारों ने इस अनुवाद-कार्य को सुचारू रूपेण निबाहा है जिसके परिणाम-स्वरूप अनूदित नाटक भाषा की दृष्टि से सुगम तथा सरल हैं। इनमें कथा की गति अनवरुद्ध रही है और संवाद प्रवाहमान रहे हैं। रंगमंच-सम्बन्धी निर्देश भी स्पष्ट तथा सुबोध हैं। अनुवाद रूप में इन नाटकों की अभिनेयता प्रायः बरकरार रह पाई है। नाटक सम्बन्धी पारिभाषिक शब्दों के लिए प्रयुक्त पहाड़ी शब्दों में भी यथा सम्भव समानता रखी गई है। एक ही नाटक में 'सूतरदार' तथा 'सूत्रदार' दोनों का प्रयोग अवश्य अखरता है। और फिर विद्वान अनुवादक ने "सुविपुलमहाग्रीवस्य सुग्रीवस्य" के स्थान पर "बोड़ी कैरी आलै सुगरीबौरु" मात्र क्यों लिखा (सुग्रीव की ग्रीवा की विपुलता की उपेक्षा करते हुए) ? अस्तु, यह दोष मन भर आटे में चुटकी भर नमक के समान नगण्य है। कुल मिलाकर भाषान्तरण सफल रहा है क्योंकि अनूदित नाटकों में प्रायः मूल ग्रन्थों की आत्मा को तिरोहित अथवा विकृत होने से बचाते हुए उसको अनुवाद सोपान द्वारा पहाड़ी-जगत् में अवतरित किया गया है।

छनाट का मुद्रण प्रायः दोष-विहीन है। आवरण चित्र में षड्दल तथा पहाड़ी वाद्य-यन्त्र और उनकी पृष्ठभूमि में रंग-मंच को चित्रित किया गया है। यह सर्वथा सार्थक तथा आकर्षक है।

दूसरी भाषाओं के उत्कृष्ट साहित्य को पहाड़ी में अनूदित करने से एक ओर तो पहाड़ी-भाषियों को अपनी ही भाषा में अन्य भाषाओं में लिखित कृतियों के रसास्वादन का अवसर मिलेगा, दूसरी ओर इससे मूल ग्रन्थों के अनुवाद के लिए अपेक्षित पहाड़ी शब्दों की खोज-टोह की प्रवृत्ति बढ़ेगी। इसके अतिरिक्त इससे अन्य भाषाओं से कुछ उपयुक्त शब्द उधार लेकर पहाड़ी भाषा के शब्द-कलेवर को और अधिक विशाल बनाने का अवसर प्राप्त होगा। निश्चय ही प्रस्तुत पुस्तक इस दिशा में एक प्रेरणा-स्रोत की भूमिका निबाहेगी।

कृष्ण चन्द्र शर्मा,
सचिव,
हिमाचल प्रदेश लोक-सेवा आयोग।

SOMSI

Declaration under Claus 19-D of the Press and Registration of Books Act, 1867 as modified in 1956.

FORM IV

(*See Rule* 8)

Place of Publication	..	Simla,
Periodicity of Publication	..	Quarterly.
Printer's Name	..	Shri K. C. Bhardwaj.
Nationality	..	Indian.
Address	..	Deputy Controller, Printing & Stationery, Himachal Pradesh, Simla-3.
Publisher's Name	..	Dr. Bansi Ram Sharma.
Nationality	..	Indian.
Address	..	Research Officer, Himachal Academy of Arts, Culture and Languages, Pari Mahal, Simla–9.
Editor's Name	..	Dr. Bansi Ram Sharma.
Nationality	..	Indian.
Address	..	Research Officer, Himachal Academy of Arts, Culture and Languages, Pari Mahal Simla–9.

I, Dr. Bansi Ram Sharma, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Dr. BANSI RAM SHARMA.

H.A.A.C.L.

आर० एन० 28271/75

निदेशक, शिक्षा विभाग हि० प्र० द्वारा पत्राङ्क ई डी ऐन–एच्च (8)–6(3)1/75, 24 फरवरी, 1975 के अनुसार प्रदेश के समस्त कालेजों, पाठशालाओं व जिला पुस्तकालयों के लिये स्वीकृत ।

हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, परिमहल, शिमला-9 द्वारा प्रसारित तथा उप-नियन्त्रक, मुद्रण तथा लेखन-सामग्री, हिमाचल प्रदेश, शिमला-3 द्वारा मुद्रित ।